 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

फाल्गुन-चेत, संवत् नानकशाही ५४६-४७
वर्ष ८ अंक ७ मार्च 2015

संपादक : सिमरजीत सिंह
सहायक संपादक : जगजीत सिंह

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**



फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

आखा जीवा विसरै मरि जाउ ॥ आखणि अउखा साचा नाउ ॥
साचे नाम की लागै भूख ॥ उतु भूखै खाइ चलीअहि दूख ॥१॥
सो किउ विसरै मेरी माइ ॥ साचा साहिबु साचै नाइ ॥१॥ रहाउ ॥
साचे नाम की तिलु वडिआई ॥ आखि थके कीमति नही पाई ॥
जे सभि मिलि कै आखण पाहि ॥ वडा न होवै घाटि न जाइ ॥२॥
ना ओहु मरै न होवै सोगु ॥ देंदा रहै न चूकै भोगु ॥
गुणु एहो होरु नाही कोइ ॥ ना को होआ ना को होइ ॥३॥
जेवडु आपि तेवड तेरी दाति ॥ जिनि दिनु करि कै कीती राति ॥
खसमु विसारहि ते कमजाति ॥ नानक नावै बाझु सनाति ॥४॥ *(पन्ना ३४९)*

उपरोक्त शबद श्री गुरु नानक देव जी द्वारा आसा राग में उच्चारण किया गया है। इस शबद में श्री गुरु नानक देव जी फरमान कर रहे हैं कि जब मैं प्रभु का नाम-सिमरन करता हूं तो मेरे अंदर आत्मिक जीवन पैदा होता है। जब मैं प्रभु-नाम को भूल जाता हूं तो मेरी आत्मिक मृत्यु होने लगती है। प्रभु का नाम-सिमरन करना कठिन काम है अर्थात् सांसारिक कार-व्यवहार करते हुए प्रभु को हर पल याद रखना बहुत मुश्किल काम है। जिसके अंदर प्रभु-नाम-सिमरन की भूख, चाह पैदा होती है, वो नाम-सिमरन द्वारा इस भूख, चाह को मिटाकर सारे (सांसारिक) दुखों से मुक्ति पा लेता है, उसके सारे दुख दूर हो जाते हैं। गुरु जी कह रहे हैं कि हे मेरी मां! ऐसा प्रभु मुझे कभी न भूले। सच्चे, सदा स्थिर रहने वाले साहिब (प्रभु) का नाम-सिमरन करने से वो हृदय में निवास करने लगता है अर्थात् उसके हृदय में बसे होने का आभास होने लगता है। सदा स्थिर रहने वाले प्रभु की थोड़ी-सी प्रशंसा, स्तुति करके जीव थक गए हैं। मगर कोई भी यह नहीं बता सका कि उसके समान कोई अन्य हस्ती है अर्थात् उसके समान कोई अन्य ढूंढना या खड़ा करना असंभव है। यदि सारे जीव मिलकर प्रभु का स्तुति-गान करें तो वो (अपनी वास्तविकता से) बड़ा नहीं हो जाता तथा यदि कोई उसका स्तुति-गान न भी करे तो वो (अपनी वास्तविकता से) छोटा नहीं हो जाता अर्थात् वो ज्यों का त्यों ही रहता है। प्रभु न कभी मरता है और न ही (उसके मरने का) शोक होता है अर्थात् वो काल से परे है, इसलिए उसके कालवश होने का कोई शोक भी नहीं। प्रभु की दी हुई दातें मनुष्य सदा भोगता है (निरंतर इस्तेमाल करता है), फिर भी वे दातें कभी खत्म नहीं होती। प्रभु का सबसे बड़ा गुण यह है कि उसके जैसा कोई अन्य नहीं है। न ही कोई उसके जैसा हुआ है और न होगा। अंतिम पंक्तियों में गुरु जी का फरमान है कि जिसने दिन-रात बनाए हैं, जितनी महानता उस प्रभु की है उतनी ही महानता उसके द्वारा प्रदान बख़्शिशों की है। जो जीव प्रभु को भुला देते हैं वे बुरे कर्म (आचरण) वाले हैं अर्थात् उन्हें बुरे काम करने वाले समझो। परमात्मा के नाम से विहीन जीव नीच हैं। कहने से तात्पर्य कि प्रभु को भुलाना, उसके नाम का सिमरन न करना ही मनुष्य की नीच एवं गलत आचरण वाला होने की निशानी है।





आओ! होला-महल्ला मनायें

सिक्खों को बुराइयों से जूझने की जन्म-घुट्टी तो सिक्ख धर्म के जन्म से ही श्री गुरु नानक देव जी ने दे दी थी। परिणामतः मज़हब, रंग-नसल, जात-पात, छूआ-छूत जैसी कई अहम बुराइयों की जड़ उखड़ गई। गुरु जी द्वारा बख़्शिश किए गए मुख्य सिद्धांत-- 'नाम जपो, किरत करो, वंड-छको' ने एक नई जागृति पैदा की। समय के अनुसार जड़ पकड़ रही बुराइयों के खिलाफ सिक्ख गुरु साहिबान तथा उनके सिक्खों ने बड़ी हिम्मत एवं हौसले से लड़ाई लड़ते हुए, बेमिसाल शहीदियां प्राप्त करते हुए समाज को नई दिशाएं दी। बुराइयों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए पूर्वगामी नीतियों का निर्माण किया जाता। दसम पातशाह साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय समाज की हालत बड़ी तरसयोग्य हो गई थी। राजनैतिक शक्तियों की आड़ में साधारण व्यक्ति पर कहर ढाया जा रहा था। स्त्रियों की दशा और भी तरसयोग्य थी। नव-विवाहितों को डोलियों में से ही उठा लिया जाता था। कोई भी ज़ालिम हाकिमों के कुकर्मों को रोकने की हिम्मत न करता। गुरु जी ने उस समय की चुनौतियों पर दृष्टि डालते हुए महसूस कर लिया था कि संघर्ष के लिए नये पैंतरे धारण करने पड़ेंगे, आम जनता को निडरता का एहसास करवाना पड़ेगा। होली का त्योहार जो झूठ पर सत्य की विजय के प्रतीक के रूप में मनाया जाता था, मात्र दिखावा ही नहीं बल्कि कई तरह की बुराइयों को जन्म देने लग गया था। लोग एक-दूसरे पर गंद-मंद फेंकते, बुरा-भला बोलते, शराब पीते, जूआ खेलते हुए इस त्योहार की मौलिकता से दूर जा रहे थे। गुरु साहिब ने १७५७ बिक्रमी की होली वाले दिन इकट्ठी हुई संगत को नये सिद्धांत से होला-महल्ला मनाने का आदेश दिया। गुरु जी ने सिंघों के दो दल तैयार किये। दोनों दलों के योद्धाओं की पहचान के लिए उनको अलग-अलग रंग की पोशाकें पहनाईं। एक दल को किला होलगढ़ के रक्षक के रूप में तैनात कर दिया तथा दूसरे को किले पर हल्ला बोलने का हुक्म हुआ। जहां जीत प्राप्त करने वाले दल को गुरु जी द्वारा विशेष रूप से सम्मानित किया गया वहीं दोनों दलों को भरपूर कड़ाह प्रसाद भी छकाया गया। सिक्खों ने गुरु जी द्वारा बख़्शी इस परंपरा को श्री अनंदपुर साहिब की धरती पर अमूल्य खज़ाने के रूप में आज भी संभाला हुआ है। यह गुरु जी की सिंघों को वो देन थी जिसकी बदौलत वे सवा-सवा लाख वैरियों के विरुद्ध डट गए। इसी बख़्शिश ने सिक्खों को जुल्म के विरुद्ध डटना सिखाया, राजनैतिक पदों तक पहुंचाया, सच की खातिर मरना सिखाया।

आज जब हम २१वीं सदी में विचर रहे हैं तो हमारे सामने कई नई चुनौतियां खड़ी हैं। इन चुनौतियों की चिंता हर कोई कर रहा है। हमें चिता से चिंतन की ओर बढ़ना पड़ेगा। इन चुनौतियों का चिंतन करना ही आज हमारा प्रमुख कर्त्तव्य है, ताकि हम आने वाली पीढ़ियों को अपनी गौरवमयी विरासत से वाकिफ़ करवाकर जुल्म का मुकाबला करने के योग्य बना सकें।

आज हमें योजना बनाने की ज़रूरत है मादा-भ्रूण हत्या के विरुद्ध जंग लड़ने की। हिंदोस्तानी समाज में मादा-भ्रूण हत्या जैसी अभद्र प्रवृत्ति अति प्राचीन है। यह बुराई इस हद तक पहुंच गई है कि अब जन्म लेने से पहले ही बच्ची का कत्ल कर दिया जाता है। इस अभद्र प्रवृत्ति को रोकने के लिए श्री अकाल तख़्त साहिब से भी आदेश जारी हो चुका है। इस बुराई के विरुद्ध लड़ने के लिए हमें अपने गांवों, महल्लों में लोगों को जागृत करना पड़ेगा। आओ! मादा-भ्रूण हत्या के विरुद्ध संघर्ष हेतु जागृत होने के लिए योजना बनायें तथा होला-महल्ला मनायें।

नशे आज हमारी नौजवान पीढ़ी के लिए जी का जंजाल बन गये हैं। नशों में ग्रस्त जवानी ने किसी का तो क्या संवारना होता है, बल्कि अपने आप को संभालने में भी असमर्थ हो जाती है। आधुनिक परिवारों में जहां पहले ही एक-दो बच्चे हैं और यदि वे भी नशों के राह पर चल पड़ें तो उनके माता-पिता को जीते-जी लाशों के रूप में जीवन गुज़ारते हुए देखा जा सकता है। किसी साज़िश अधीन देश की नौजवानी का इस मार्ग पर चल पड़ना आज एक बहुत बड़ी समस्या है। इस समस्या के हल के लिए हमें अपनी नौजवान पीढ़ी को जागृत करना पड़ेगा, उनको खेलों के प्रति जागरूक करके जीवन की अमूल्यता का ज्ञान करवाना पड़ेगा, सेहतमंद समाज के विकास के निर्माण में उनकी योग्य हिस्सेदारी का एहसास करवाना पड़ेगा। आओ! नशों को दूर भगायें तथा होला-महल्ला मनायें।

संगीत की मनुष्य के जीवन में बड़ी अहम महत्ता मानी जाती है। श्री गुरु नानक देव जी गुरमति संगीत से दुनिया में एक नई क्रांति लेकर आए। हमारा गुरमति संगीत हमें वारों द्वारा विरासत से जोड़कर हमेशा ही गौरवमयी घटनायों से अवगत करवाता आया है, परंतु आज का संगीत पश्चिमी प्रभाव तले एक शोर ही बनकर रह गया है, जिस पर अश्लीलता की परत चढ़ाकर नौजवान पीढ़ी को भ्रमित करने की कोशिश की जा रही है। अब कुछ जागरूक सूझवान एवं महिलाओं द्वारा ऐसे ऐसे गायकों के विरोध में खड़े होना एक बढ़िया एवं सार्थक कदम है। आओ! हम भी इस समस्या के विरोध में योजनायें तैयार करें। गांवों में गुरबाणी कीर्तन, ढाढी वारों, कवीशरी वारों से नौजवानों को उनकी गौरवमयी विरासत से अवगत करवाने के लिए गुरमति समागम करवायें तथा होला-महल्ला मनायें।

प्रदूषण की समस्या से आज सारा विश्व लड़ रहा है। हमारे वातावरण में इतना ज़हर हर रोज़ घुल रहा है कि मनुष्य का जीना ही मुश्किल होता जा रहा है। इस ज़हर को सोख लेने के लिए हमें प्रकृति द्वारा मिले अमूल्य साधन वृक्षों का हम कत्लेआम किए जा रहे हैं। हमें अपने भविष्य के बारे में सोचना पड़ेगा कि हमारी आने वाली पीढ़ी तंदरुस्त हो या बीमार? आओ! प्रदूषण को हटायें, वातावरण बचायें तथा होला-महल्ला मनायें।

हमें अपने राजनैतिक, शैक्षणिक तथा सामाजिक हालात पर भी दृष्टि डालनी पड़ेगी तथा भविष्य के लिए योजनायें तैयार करनी पड़ेंगी। हमारे गुरु साहिबान ने इसके प्रति हमें मीरी-पीरी का बहुत बड़ा सिद्धांत बख़्शिश किया है। अगर हमारे पास अच्छी राजनैतिक, शैक्षणिक तथा सामाजिक शक्ति होगी तो ही हम विकास की ओर जा सकेंगे। हमें संसार की दूसरी शक्तियों के मुकाबले में खड़े होने के लिए अच्छी योजनायें तैयार करके उनका प्रचार करना पड़ेगा। आओ!

गुरबाणी से दिशा लेकर सकारात्मक योजनायें बनायें तथा होला-महल्ला मनायें।

आज हमारे में किंतु-परंतु करने की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गई है कि हम अपने गुरु साहिबान के मान-सम्मान को भी आंखों से ओझल करते जा रहे हैं। हम अपने थोड़े-से फायदे के लिए अपने इतिहास को बिगाड़कर पेश करने में कोई झिझक महसूस नहीं कर रहे, जबकि किसी भी घटना या वृत्तांत को समझने के लिए समय, भाषा, स्थान तथा परिस्थितयों का ज्ञान होना अति आवश्यक होता है। आज लेखक तथा विद्वान भाइयों के सामने यह बहुत बड़ी चुनौती है कि रातो-रात बने तथाकथित विद्वान जो हमारे इतिहास को बिगाड़कर पेश कर रहे हैं, उनके साथ कैसे निपटा जाये। आओ! लोगों को सही ज्ञान करवायें तथा होला-महल्ला मनायें।

आज फैशन के दौर में फ़िल्मों आदि के प्रभाव अधीन हमारे बच्चे पतितता की मार तले आ रहे हैं। कई घरों में (सिक्ख) महिलाओं को बच्चों के केशों की संभाल के प्रति यह भी कहते हुए सुना जा सकता है कि "हमसे नहीं इनके केशों की संभाल होती, जब बड़े होंगे खुद ही रख लेंगे।" हमारी इन माताओं को उन महान माताओं को नहीं भूलना चाहिए जिन्होंने हमारे अस्तित्व एवं पहचान को बरकरार रखने के लिए अपने दूध-पीते बच्चे नेजों पर टंगवा लिए। आज यदि हमारे बच्चे पतितता की ओर बढ़ रहे हैं तो इसका एक कारण हमारे द्वारा उनको सही अगुआई न देना भी है। वे अपनी जानने की शक्ति की भूख को फिल्मों, इंटरनेट, टी. वी. द्वारा ही पूरा कर रहे हैं। वहां उनको जो कुछ दिखाया जा रहा है वे उसको ही अपने जीवन में अपना रहे हैं। हमें चाहिए कि हम बच्चों के लिए खुद कुछ समय निकालें और उनको अपनी अमीर विरासत की जानकारी दें, जिससे उनके उज्जवल भविष्य को अंधेरों से बचाकर सीधे रास्ते पर डाला जा सके। आओ! बच्चों को विरासत से अवगत करवायें तथा होला-महल्ला मनायें।

हमारे सामने उपरोक्त विकराल समस्याएं मुंह फैलाए खड़ी हैं। आओ, इनके मुकाबले के लिए योजनायें तैयार करें, अपनी प्राचीन परंपराओं से प्रेरणा लें तथा इन समस्याओं की जड़ उखाड़कर होला-महल्ला मनायें। इन कार्यों के लिए हमें अपने नज़दीक वाले गुरुद्वारा साहिब में खालसाई रूप-रंग-ढंग वाले संगती दीवान आयोजित करने पड़ेंगे। कई गांवों वाले मिलकर भी ऐसा उद्यम कर सकते हैं। होले-महल्ले के स्थानीय संगती दीवान में सिक्ख नौजवानों की भरपूर शमूलियत बनाकर उनको बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने की प्रेरणा दी जा सकती है। छोटे बच्चों को गुरुद्वारों के संगती समागमों में जाने की प्रेरणा दें। गांवों, महल्लों में खेल मेलों, गतका अख़ाड़ों, साहित्यक सभाओं, गुरमति समागमों आदि में बच्चों को जाने की प्रेरणा दें! होले-महल्ले वाले दिन नौजवानों को खूनदान, आंखें दान करने आदि के कैंप लगाकर समाज के प्रति शुभ कार्म करने के लिए प्रेरणा दें! बच्चों को रंगों में प्रयोग किए जा रहे रासायनिक पदार्थों, उनके प्रदूषण तथा नुकसान से अवगत करवायें! इस दिन बच्चों, नौजवानों में वृक्ष लगाने तथा उनको पालने की प्रेरणा देकर, गुरमति विचारधारा की दिशा पर चलते हुए, पंथक आन-शान तथा हर्षोल्लास से होला-महल्ला मनाते हुए मानवता की सेवा में अपना हिस्सा डालें! आओ! होला-महल्ला मनायें। ☸

गुरु-घर के कीर्तनियों के आदर्श : भाई मरदाना जी

*-भाई निरमल सिंघ**

परमात्मा की प्राप्ति के सिरमौर साधन गुरमति संगीत तथा गुरबाणी-कीर्तन के पितामह श्री गुरु नानक देव जी के अति प्यारे एवं निकटवर्ती साथी भाई मरदाना जी थे, जो कि पिता भाई बादरा जी तथा मां माता लक्खो जी के घर १४५९ ई में राय भोय की तलवंडी (पाकिस्तान) में पैदा हुए। उनको अपनी ज़िंदगी का लंबा हिस्सा (लगभग ५४ वर्ष) गुरु साहिब के साथ बिताने का गौरव हासिल हुआ। आप जी के जीवन के बारे में बहुत कुछ लिखा जाना अभी शेष है। श्री गुरु नानक देव जी के साथ सदैवकालीन संगत तथा चार धर्म-प्रचार-यात्राओं के दौरान आप जी को ब्रह्म-ज्ञान की अवस्था की प्राप्ति तथा संगीत जैसी अति कठिन एवं सब कलाओं में से सूक्ष्म कला की मुहारत भी हासिल हुई। गुरु साहिब जब परमात्मा की याद में जुड़ते उसका गुणगान करते तो शबद उच्चारण करते हुए भाई मरदाना जी को सहज भाव से रबाब की अति सुरीली तरंगें छेड़ने के लिए कहते : "मरदानिआ! रबाब वजाइ, काई सिफ्त खुदाइ दी करीए।" (मरदाना! रबाब बजा, प्रभु का गुणगान करें।) भाई मरदाना जी को गुरु-आवाज़ सुनकर कोई अद्वितीय जोश चढ़ जाता। परमात्मा की प्रशंसा में श्री गुरु नानक देव जी तथा भाई मरदाना जी एक हो जाते। भाई मरदाना जी ने दुनियावी रसों से तो मोह तभी से तोड़ लिया था जब से वे श्री गुरु नानक देव जी के साथ धर्म-प्रचार-यात्राओं के लिए चले थे।

वर्णनयोग्य है कि भाई मरदाना जी के बारे में बहुत-से लेखकों ने मसखरा, भंड, डरपोक, बुज़दिल, भूखा, प्यासा, लालची तथा कायर जैसे शब्द लिखकर भाई साहिब के अदब-सत्कार, उनकी महान शख़्सियत तथा उनकी ब्रह्म अवस्था पर चोट की है, जो कि आप जी का घोर अपमान करने के तुल्य है। श्री गुरु नानक देव जी के पावन स्पर्श का आनंद जितना भाई मरदाना जी ने माना है, शायद अन्य किसी को नसीब हुआ हो। श्री गुरु नानक देव जी भाई मरदाना जी को अपना सच्चा मित्र तथा साथी जानकर प्यार करते रहे। चाहे कि भाई साहिब जी आयु में पातशाह जी से बड़े थे परंतु दोनों का साथ होने के कारण बाबा जी तथा भाई मरदाना जी आपस में इतना घुल-मिल गए थे कि उम्र के फासले को देखा नहीं जा सकता था।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'बिहागड़े दी वार' में भाई मरदाना जी के नाम वाला सलोक दर्ज है :

सलोकु मरदाना १ ॥
कलि कलवाली कामु मदु मनूआ पीवणहारु ॥
क्रोध कटोरी मोहि भरी पीलावा अहंकारु ॥
मजलस कूड़े लब की पी पी होइ खुआरु ॥ . .
कांयां लाहणि आपु मदु अंम्रित तिस की धार ॥
सतसंगति सिउ मेलापु होइ लिव कटोरी अंम्रित भरी पी पी कटहि बिकार ॥ (पन्ना ५५३)

भाई मरदाना जी से लेकर मौजूदा समय तक सिक्ख कौम में गुरु-घर के कीर्तनियों का अथाह सत्कार है। यह प्यार-सत्कार श्री गुरु नानक देव जी के पहले कीर्तनिये भाई मरदाना जी के ही कारण है। आधुनिक समय में हिंदोस्तान में जितना भी क्लासिकल भक्ति-रस

**३, गली नं. ८, शहीद ऊधम सिंघ नगर, श्री अमृतसर-१४३००६; फोन : ९८१५९९२१३५*

तथा सुर-संगीत का कोश है, उसके प्रवर्त्तक भाई मरदाना जी ही हैं। गुरु साहिब से गुरमति संगीत का गुण हासिल करके भाई मरदाना जी ने आगे बांटा। उसी ही शताब्दी में पैदा हुए प्रसिद्ध संगीतकार पंडित हरी दास जंगल-बेलों तथा मठों में विचरते हुए भाई मरदाना जी से शास्त्रीय संगीत की शिक्षा हासिल करते रहे। उस समय के दौरान केवल संगीत में भक्ति-रस ही प्रधान होता था। पंडित हरी दास से मीयां तानसेन (प्रसिद्ध संगीतकार) तथा बैजू बावरा जैसे संगीत पितामह ने विद्या प्राप्त करके सारे हिंदोस्तान में अपने शिष्यों द्वारा संगीत का प्रचार किया।

गुरबाणी-कीर्तन की श्रृंखला को आगे बढ़ाते हुए भाई मरदाना जी के दो सुपुत्रों-- भाई रजादा जी तथा भाई सजादा जी से आगे अनेकों रबाबी कीर्तनिये हुए। भाई सत्ता जी, भाई बलवंड जी, भाई बाबक जी, भाई मोती जी, भाई ताबा जी, भाई चांद जी, भाई मनशा सिंघ, भाई शाम सिंघ, भाई हीरा सिंघ आदि माननीय शख़्सियतों ने इस महान परंपरा को कायम रखते हुए गुरु आशय के अनुसार गुरमति संगीत की पहचान बनाए रखी। गुरु-घर के कीर्तनिये श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आशय के अनुसार गुरु-घर द्वारा स्थापित महान कीर्तनिये भाई मरदाना जी की शैली के अनुसार ही कीर्तन करने का यत्न कर रहे हैं तथा सिक्ख कौम के प्राचीन तंती साज़ों को बाकायदा बजाते चले आ रहे हैं। इन महान परंपराओं को बनाए रखने की खातिर रियाज़ तथा मेहनत करते आ रहे हैं। रागों में निर्धारित गुरबाणी की कीर्तन-शैली को भाई मरदाना जी ने बहुत ही सख़्त मेहनत तथा रियाज़ के लंबे संघर्ष के उपरांत गुरु साहिब की बख़्शिश द्वारा प्राप्त किया तथा समूह गुरु-घर के कीर्तनियों को भी ऐसा ही उपदेश था। गुरबाणी संगीत की बदौलत भारत में धार्मिक संगीत का शौक रखने वालों ने रियाज़ करते हुए संसार के महान गायक होने का गौरव हासिल किया।

एक समय ऐसा भी था जब सिक्ख कौम के धार्मिक स्थानों में बहुत ही गुणी-जन कीर्तनी जत्थे थे। सिक्ख कौम के केंद्रीय स्थान श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में इतने बड़े-बड़े गुणी-जन कीर्तनिये तथा रबाबी सिक्ख रहे हैं कि शास्त्रीय संगीत के बड़े-बड़े उस्ताद लोग भी इनके सामने आने से आनाकानी करते रहे हैं। गुरु-घर के ऐसे महान कीर्तनियों के आदर्श श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित महान कीर्तनिये भाई मरदाना जी हैं। गुरबाणी संगीत के दुर्लभ तथा विशाल खज़ाने की अमीर विरासत पर गुरु-घर के कीर्तनियों एवं सिक्ख संगत को हमेशा ही गर्व रहा है, क्योंकि यह एक बहुत बड़े संघर्ष के बाद प्रफुल्लित हो सका है। भाई मरदाना जी तथा उनके बाद हुए गुरु-घर के कीर्तनियों ने हिंदोस्तान के अलावा अन्य देशों में भी गुरबाणी-कीर्तन की मनमोहक तथा आत्मिक सुगंध को बिखेरा एवं प्रचारा है। यही कारण है कि संसार भर की संगीत-शैलियों में गुरमति संगीत अति सुरीला तथा उच्चतम है।

गुरबाणी-कीर्तन का विशाल भंडार है, जो कि रूहानियत के स्रोतों से सरशार तथा भरपूर है। खेद, हम इस रूहानियत के आबे-हयाती चश्मे की अमृतमयी स्वाति बूंदों से वंचित होते जा रहे हैं।

कभी गुरसिक्खों के महान कीर्तनियों के पास दिल के मर्म को छू लेने वाले साज़-- रबाब, सारंदा, ताऊस, दिलरुबा, तानपूरा तथा वीणा जैसे तंती साज़ों की भरमार थी। वे इन साज़ों को बजाने एवं गाने के पूरे माहिर थे। ऐसे महान रागी सिंघों को सुनकर बड़े-बड़े विद्वान, उस्ताद भी दांतों तले उंगलियां दबाते हुए सम्मान प्रदान करते थे तथा गुण हासिल करने के लिए, उनके शागिर्द बनने के लिए विनतियां करते रहते थे। ❂

भाई मरदाना जी

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जन्म और नामकरण : भाई मरदाना जी का जन्म सन् १४५९ में राय भोय की तलवंडी में हुआ। उनके पिता का नाम भाई बादरा जी और मां का नाम माता लक्खो जी था जो कि (तथाकथित) चौबड़ जाति के मुसलमान थे। ये लोग 'मीरासी' (डूम) कहलाते थे। प्रचलित व्यवसाय परंपरा के अनुसार इस वर्ग के पुरुष, लोगों के मांगलिक कार्यों के अवसर पर नाच-गान करके उपहार प्राप्त करते थे। श्री गुरु नानक देव जी के दादा श्री शिव नारायण के समय से इस (तथाकथित) चौबड़ जाति का संबंध गुरु जी के परिवार से ही था, जो आगे की पीढ़ियों तक भी बना रहा।

भाई मरदाना जी के जन्म से पहले माता लक्खो ने छ: बच्चों को जन्म दिया किंतु वे अधिक समय तक जीवित न रहे। भाई बादरा जी और माता लक्खो जी ने अपनी इस सातवीं संतान का नाम 'दाना' रखा।[१] फारसी में 'दाना' शब्द का अर्थ है-- "समझदार, अकलमंद, होशियार। श्री गुरु नानक देव जी से हुई पहली मुलाकात में गुरु जी ने उनसे उनका नाम पूछा। उन्होंने जवाब दिया, "दाना डूम।" गुरु साहिब ने मुस्करा कर कहा-- "भाई! तू 'दाना डूम' नहीं, आज से 'मरदाना' कहलाएगा।" फलत: भाई दाना जी उस दिन से 'भाई मरदाना जी' कहलाने लगे।[२]

मोहसिन फानी नामक मुसलिम इतिहासकार के अनुसार-- "तलवंडी का एक मुसलमान मीरासी 'मरदाना' था, जिसकी उम्र श्री गुरु नानक देव जी से १० वर्ष बड़ी थी। उसकी सुरीली आवाज़, अच्छा रहन-सहन और प्रभु-भक्ति में गहन रुचि देखकर बाबा नानक जी ने उसको (अपना) भाई बना लिया। जब भी गुरु जी प्रभु-स्तुति के गीत गाते थे तो वह रबाब पर गुरु साहिब की भक्तिपरक बाणी की धुनें निकालता था। फलत: श्री गुरु नानक देव जी के ईश्वरीय शबद सुनने के लिए लोगों की भीड़ लग जाती थी।"[३]

गुरु साहिब के सहयात्री : श्री गुरु नानक देव जी ने दूसरे धर्म के मानने वालों की भावनायों को समझने और अपनी निर्गुण भक्ति के प्रचार हेतु चार बार देश-विदेश की यात्रा की। उनकी इस रुचि को गुरमति भाषा में 'उदासी' कहा जाता है। वर्षों तक अपने संबंधियों से दूर विचरण करने के दौरान भाई मरदाना जी को ही उन्होंने अपने साथी के रूप में चुना। अपनी पहली उदासी (प्रचार-यात्रा) से पूर्व गुरु साहिब ने भाई मरदाना जी को रबाब ख़रीदने के लिए भेजा, जिसके लिए गुरु साहिब की बड़ी बहन बीबी नानकी जी ने पैसे दिए थे।

"भारत में उन दिनों रबाब नामक वाद्ययंत्र ईरान से मंगवाया जाता था, जिसमें चार तारें होती थीं। गुरु साहिब ने छ: तारों वाली रबाब तैयार करवाई, जिसकी तारें कच्चे रेशम की थीं। सिक्ख विद्वानों का कथन है कि श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी बहन जी की धनराशि

*जीवन संत कुटिया, १६९७, मुहल्ला दीवान चंद, समीप आर्य समाज, पटियाला-१४७००१

से रेशम की छः तारों वाली रबाब भैरोआणा निवासी भाई फरिंदे से तैयार करवाई थी, जिसका असली नाम भाई इंद्रसेन बताया जाता है।"[४]

भला रबाब वजाइंदा मजलस मरदाना मीरासी।
(वार ११:१३)

गुरु साहिब के मनोहर भगवद् वचनों के साथ भाई मरदाना जी की रबाब के मधुर संगीत का जादुई प्रभाव जनता पर होता था :

फिरि बाबा गइआ बगदादि नो बाहरि जाइ कीआ असथाना।
इकु बाबा अकाल रूप दूजा रबाबी मरदाना।
दिती बांगि निवाजि करि सुंनि समानि होआ जहाना ॥ (वार १:३५)

गुरु साहिब जब 'धुर की बाणी' के प्रस्फुटन के समय शबद-गायन किया करते थे तो वे सर्वप्रथम भाई मरदाना जी को संबोधित होते थे-- "भाई मरदानिआ! रबाब बजा, बाणी आई ए।"

इसके अनेक उदाहरण जन्म-साखियों (श्री गुरु नानक देव जी के जीवन-वृत्त) में मिलते हैं। जब गुरु जी पाकपटन (ज़िला मिंटगुमरी, पाकिस्तान) पहुंचे तो उस समय शेख फ़रीद जी की गद्दी पर शेख इब्राहीम विराजमान थे। शेख साहिब का एक शिष्य, जिसका नाम शेख़ कमाल था, अपने पीर की रसोई में भोजन बनाने के लिए लकड़ियां इकट्ठी करने आ गया। उस समय गुरु साहिब यह शबद गा रहे थे-- *"आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं ॥"* इसकी मधुर धुन भाई मरदाना जी अपनी रबाब पर पेश कर रहे थे। शेख कमाल ने इस मधुर शबद को सुनकर मन ही मन स्मरण कर लिया और अपने पीर शेख इब्राहीम से उस पद का अर्थ पूछा। दुविधा में पड़े हुए शेख इब्राहीम ने स्वयं श्री गुरु नानक देव जी की शरण में पहुंचकर अपनी शंकाओं का निवारण किया।[५]

श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी पहली प्रचार-यात्रा से पूर्व ही भाई मरदाना जी को कहा था कि वे कभी भी केश न काटें, अमृत वेले उठकर सतिनाम का जाप करें और ज़रूरतमंदों की सहायता करें।[६]

श्री गुरु नानक देव जी के अपनी चौथी उदासी (धर्म-प्रचार-यात्रा) के समय अफ़ग़ानिस्तान की 'कुरम' नदी के तट पर बसे हुए 'कुरम नगर' में कुछ दिन के निवास के दौरान भाई मरदाना जी ने अपनी देह का त्याग किया।

संदर्भ-सूचीः-

१-२. स. सिमरजीत सिंघ, गुरबाणी के सबसे पहले संगीतकार : भाई मरदाना जी, गुरमति ज्ञान, मई २०१३, पृष्ठ १०-११.

३. मोहसिन फानी, दबिस्तान-मज़ाहब

४. स. सिमरजीत सिंघ, गुरबाणी के सबसे पहले संगीतकार : भाई मरदाना जी, गुरमति ज्ञान, मई २०१३, पृष्ठ १२.

५. (क) डॉ. गुरबचन कौर, जनमसाखी भाई बाला दा पाठ-प्रमाणीकरण ते आलोचनातमक संपादन, भाई बाला जी की ७१वीं साखी, भाषा विभाग, पंजाब सरकार, पटियाला, सन् १९८७.

(ख) डॉ. जसबीर सिंघ साबर (संपा.), गिआन रतनावली - जन्म साखी श्री गुरु नानक देव जी दा पाठ-आलोचन, पृष्ठ २५५, गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी, श्री अमृतसर, सन् १९९३.

६. स. सिमरजीत सिंघ, गुरबाणी के सबसे पहले संगीतकार : भाई मरदाना जी, गुरमति ज्ञान, मई २०१३, पृष्ठ १२

गुरु-घर के अनन्य सेवक भाई मरदाना जी

*-स. सुरजीत सिंघ**

श्री गुरु नानक देव जी ने धार्मिक सहिष्णुता एवं मानवीय समानता के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ सद्भावना का वातावरण उत्पन्न कर निम्न एवं दलित समझे जाने वाले वर्ग को ऊंचा उठाकर सबको समानता का दर्जा प्रदान किया। भाई मरदाना जी उस महान व्यक्तित्व के धनी हैं, जिन्हें जीवन-पर्यन्त गुरु साहिबान की सत्संगत एवं सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सिक्ख इतिहास में जहां श्री गुरु नानक देव जी का नाम श्रद्धापूर्वक एवं आदर सहित लिया जाता है वहीं उनके संगी एवं हमसफर रहे भाई मरदाना जी को भी सम्मानपूर्वक स्मरण किया जाता है। भाई जी का प्रथम नाम 'दाना' था किंतु श्री गुरु नानक देव जी की संगत में आने के उपरांत उनका नाम 'मरदाना' हो गया। सिक्ख धर्म में 'भाई' की उपाधि अति विशिष्ट एवं सम्मानपूर्ण मानी जाती है। भाई मरदाना जी के श्रेष्ठ व्यक्तित्व, समर्पण की भावना एवं सेवारत् होने के कारण ही श्री गुरु नानक देव जी ने इन्हें अपना हमसफर बनाया था।

भाई मरदाना जी का जन्म सन् १४५९ में राय भोय की तलवंडी (वर्तमान श्री ननकाणा साहिब, पाकिस्तान) में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री मीर बादरा जी था, जो तथाकथित मिरासी जाति से सम्बंधित थे और माता का नाम माता लक्खो जी था। श्री गुरु नानक देव जी से भाई मरदाना जी आयु में दस वर्ष बड़े थे। भाई मरदाना जी को संगीत का ज्ञान पैतृक संगीत साधना के कारण विरासत में ही प्राप्त हुआ था। इस कारण ये मधुर स्वर में गायन के साथ-साथ रबाब बजाने में भी निपुण थे। गुरु जी ने प्रथम भेंट में ही भाई मरदाना जी से कह दिया था कि "शबद पायके राग को गाए, तां तूं मरदाना कहलाए।"

भाई मरदाना जी मुसलमान वर्ग से सम्बंधित थे और अपने माता-पिता की सातवीं संतान थे। प्रथम छः बच्चे पैदा होकर गुज़र जाने के कारण माता-पिता ने आपका नाम 'दाना' रखा था। गुरु जी और भाई मरदाना जी में गहरी मित्रता थी। गुरु जी द्वारा दिये गए भरपूर प्यार, मान-सम्मान और भाई मरदाना जी की पूर्ण समर्पण-भावना के कारण यह मित्रता जीवन भर कायम रही। सुख-दुख के जीवन-पर्यन्त संगी-साथी होने के अतिरिक्त भाई मरदाना जी उच्च कोटि के रागी थे।

श्री गुरु नानक देव जी ने भाई मरदाना जी के साथ लंबी धर्म-प्रचार-यात्राएं कीं। जब भी गुरु जी के हृदय में अमृत बाणी का उद्गम होता तो वे भाई मरदाना जी को कहते, "भाई मरदानिआ! रबाब बजा, बाणी आई ए।" भाई साहिब गुरु जी का आदेश पाकर तुरंत ही रबाब बजाने लग जाते और गुरु जी मुखारबिंद से अमृत बाणी का मधुर स्वर में गायन करते।

जब श्री गुरु नानक देव जी अफगानिस्तान के शहर खुरम में थे तो भाई मरदाना जी ने

(शेष पृष्ठ २२ पर)

**५७-बी, न्यू कालोनी, गुमानपुरा, कोटा-३२४००७ (राज.), फोन : ९४१३६-५१९१७*

होली कीनी संत सेव

*-डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ**

होली का त्योहार पुरातन काल से ही भारत में उत्सव की भांति मनाये जाने की परंपरा है। पौराणिक कथा है कि पिता हिरण्यकशिपु ने अपने पुत्र भक्त प्रहलाद को मार देने की आज्ञा दी थी जिसके लिए भक्त प्रहलाद की बुआ उसे अपनी गोद में लेकर अग्नि में बैठी थी। परमात्मा ने अपने प्रिय भक्त प्रहलाद की रक्षा की और वह बच गया जबकि उसकी बुआ अग्नि में जलकर भस्म हो गई। दुष्टता के विनाश और ईश्वर-भक्ति की महिमा के उल्लास के रूप में इस त्योहार को मनाया जाता है। सिक्ख गुरु साहिबान ने इसे भिन्न दृष्टिकोण से देखा क्योंकि उनका संदेश प्रभु पर पूर्ण आस्था एवं समर्पण का था और कर्मशील रहकर सच को समर्पित रूप से अपने जीवन में धारण करने का था। होली का त्योहार कीचड़ उछालकर, एक दूसरे पर रंग डालकर, भांग आदि नशों का सेवन करके मनाया जाता था। होली के त्योहार को मनाने का ढंग बिगाड़कर लोग खुराफात पर उतर आए और उत्पात मचाने को ही त्योहार मनाने की आनंद-प्राप्ति कहा जाने लगा।

गुरमति ने इस त्योहार को मनाकर प्राप्त होने वाले आनंद की परिभाषा और इस आनंद को प्राप्त करने की विधि बदल दी। यह क्रांतिकारी बदलाव गुरमति जीवन को देखने की विशिष्टता के अनुरूप ही विशिष्ट था, जिसे पहले कभी सोचा भी नहीं गया था। गुरमति का आनंद सांसारिक पदार्थों एवं भोग-विलास से उपजने वाला आनंद नहीं था, जिसे पांच तत्वों से मिलकर बना नाशवान तन महसूस करता और भोगता है। गुरमति का आनंद नाशवान तन के भीतर स्थित परमात्मा का अंश और सद्जीवित आत्मा का आनंद था, जिसे सांसारिकता से नहीं आध्यात्मिकता से सरोकार होता है। गुरमति के अनुसार सारे ही दिन परमात्मा के बनाये हुए हैं और एक जैसे हैं। गुरु साहिबान ने आम लोगों को समझाने के लिए होली जैसे त्योहारों को प्रतीक रूप में लिया। यह परमात्मा के संदेश को नितांत सरल और प्रभावी ढंग से लोगों तक पहुंचाने की विलक्षण शैली थी जिसे श्री गुरु नानक साहिब ने अपनी उदासियों के दौरान प्रयुक्त किया था। यह आगे चलकर सिक्ख धर्म-दर्शन की विशिष्टता बनी।

बसंत ऋतु आते ही होली की तैयारियां आरंभ हो जाती हैं। एक गुरसिक्ख कैसे इससे अपने को जोड़े, इसका सुंदर वर्णन श्री गुरु नानक साहिब ने निम्न वचन में किया है :

माहा माह मुमारखी चड़िआ सदा बसंतु ॥
परफड़ु चित समालि सोइ सदा सदा गोबिंदु ॥१॥
भोलिआ हउमै सुरति विसारि ॥
हउमै मारि बीचारि मन गुण विचि गुणु लै सारि ॥ (पन्ना ११६८)

इन पावन पंक्तियों के शाब्दिक अर्थ के अनुसार बसंत का वह खास माह आ गया है जो आनंद प्रदान करने वाला है। प्रसन्न होकर

*ई-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन : ९४१५९-६०५३३

इस आनंद को सहेजने के लिए मन में परमात्मा का ध्यान दृढ़ करना होगा। मनुष्य की अबोध स्थिति को झिंझोड़ते हुए गुरु साहिब कहते हैं कि वह माया-मोह और विकारों से ऊपर उठकर परमात्मा की महानता का स्मरण करे और उस महानता को अपने आचार और विचार में धारण करे। यह सदियों से होता चला आया था कि यह वातावरण एवं मन को प्रफुल्लता प्रदान करने वाला माह माना जाता था और इसका स्वागत एक-दूसरे को बधाई देकर, होली खेलकर किया जाता था। गुरु साहिब ने कहा कि ऐसी प्रफुल्लता सदैव प्राप्त की जा सकती है यदि मन प्रभु के सिमरन में लीन हो और परमात्मा का यशगान कर रहा हो। आनंद के लिए रंगों, मिठाइयों, नशों आदि की तथा किसी प्रकार के खास आयोजनों की आवश्यकता नहीं है। ये सारी चीज़ें नाशवान शरीर के आनंद के लिए हैं। इन पदार्थों और आयोजनों से प्राप्त आनंद तभी तक रहता है जब तक ये पदार्थ और आयोजन जारी रहते हैं। बसंत माह भी चंद दिनों का मेहमान होता है, आता है और चला जाता है। गुरु साहिब तो मनुष्य को उस आनंद की ओर ले जाने के लिए तैयार कर रहे हैं जो चिरस्थायी, सदैव साथ रहने वाला और तृप्ति प्रदान करने वाला होता है। एक ऐसा आनंद, जिसके लिए किसी भी पदार्थ अथवा आयोजन, विधि की आवश्यकता नहीं और न ही किसी विशेष समय की अपेक्षा होती है। इसके लिए विशेष आत्मिक अवस्था की आवश्यकता होती है, जो परमात्मा से ही प्राप्त होती है :

अखी कुदरति कंनी बाणी मुखि आखणु सचु नामु ॥
पति का धनु पूरा होआ लागा सहजि धिआनु ॥३॥
माहा रुती आवणा वेखहु करम कमाइ ॥
नानक हरे न सूकही जि गुरमुखि रहे समाइ ॥४॥
(पन्ना ११६८)

आत्मिक आनंद के लिए मोह-माया और विकारों का त्याग करने के बाद मनुष्य परमात्मा में इस तरह लीन हो जाए कि उसकी दृष्टि चारों ओर परमात्मा की महानता को ही देखे। ऐसा तब संभव है जब उसे परमात्मा की सर्वव्यापकता में विश्वास हो जाए और उस सर्वव्यापकता के दर्शन की लालसा जग उठे। यह विश्वास उसे गुरबाणी दिलाती है :

देस और ना भेस जाकर रूप रेख ना राग ॥
जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिउ अनुराग ॥
(जापु साहिब)

परमात्मा के कोई विशेष चिन्ह नहीं हैं। वह हर स्थान पर, हर दिशा में व्याप्त है और अनगिनत माध्यमों से अपने आप को व्यक्त कर रहा है। क्योंकि वह सब में व्याप्त है, अत: सबसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करना ही परमात्मा को देखना है। जब चारों दिशाओं में परमात्मा रचा-बसा हो तो उसके गुण और उसका संदेश ही सुनाई देता है। सच और शुभ कानों में ध्वनित होता है और यही सच मुख से भी प्रस्फुटित होता है तथा मनुष्य शुभ कर्मों की ओर अग्रसर होता हुआ, सदैव आनंद की अवस्था में आ जाता है। उसके लिए हर मौसम बसंत का मौसम हो जाता है। उसका आनंद कभी कम नहीं होता बल्कि बढ़ता ही जाता है। परमात्मा के अतिरिक्त उसे और कुछ दिखाई ही नहीं देता :

सगल भवन तेरी माइआ मोह ॥
मै अवरु न दीसै सरब तोह ॥ (पन्ना ११६९)

जब परमात्मा के अतिरिक्त और कुछ न दिखाई दे, सर्वत्र परमेश्वर ही दिखे, तभी हर काल बसंत काल बन जाता है। गुरमति की राह बसंत की राह है। इस राह पर चलते हुए

जीवन आनंद से भरपूर हो जाता है। गुरु साहिबान ने अवधारणा सामने रखी कि आनंद की प्राप्ति भौतिक पदार्थों और कामनाओं की पूर्ति से नहीं होती है। यह तो पतन का मार्ग है और परमात्मा से दूर ले जाने वाला मार्ग है। आनंद का स्रोत तो परमात्मा है। केवल आनंद की इच्छा लेकर ही परमात्मा के पास नहीं जाना है। परमात्मा के मार्ग पर जाने का अर्थ केवल आनंद की प्राप्ति नहीं है, यह तो अपने घर जाने जैसा है :

जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घरि आउ ॥ *(पन्ना ६७८)*

मनुष्य का जन्म उस आत्मा का परमात्मा से मिलन के लिए हुआ है, जिससे बिछुड़कर वह अब तक भटकती रही है। विस्माद इसलिए होता है कि जिस परमात्मा से मनुष्य बिछुड़ा हुआ था वह उसे हर जगह और अति निकट दिखाई देने लगता है :

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥१॥
ईत ऊत नही बीछुड़ै सो संगी गनीऐ ॥
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीऐ ॥रहाउ॥
प्रतिपालै अपिआउ देइ कछु ऊन न होई ॥
सासि सासि संमालता मेरा प्रभु सोई ॥२॥
अछल अछेद अपार प्रभ ऊचा जा का रूपु ॥
जपि जपि करहि अनंदु जन अचरज आनूपु ॥३॥
(पन्न ६७७)

उपरोक्त वचन श्री गुरु अरजन देव जी का है, जिसमें उन्होंने बड़े ही सुगम ढंग से आनंद के उत्सर्ग की प्रक्रिया का वर्णन किया है। गुरु साहिब ने कहा कि जो सुख मनुष्य नाशवान पदार्थों से प्राप्त करना चाहता है वह सुख अल्पकालीन होता है और अंतत: दुख में ही परिवर्तित हो जाता है। स्थिर और अविनाशी परमात्मा है जो घट-घट में व्याप्त और प्रकट है। परमात्मा ही अंत तक साथ देने वाला और प्रतिपालना करने वाला है। वही पालन-पोषण करने में समर्थ है। वह समर्थ-दाता है, जिसके भंडार में कोई कमी नहीं है। वह पल-पल मनुष्य को आधार देकर उसकी रक्षा करने वाला है। उसकी महिमा अपार है। कोई भी उसके गुणों और शक्ति का भेद नहीं जान सका है। उसकी शरण और संरक्षण प्राप्त हो जाने पर सारी चिंताएं मिट जाती हैं, सारी आशंकाएं और दुविधाएं दूर हो जाती हैं। जब कोई चिंता न हो और जीवन संरक्षित हो जाए तो मन परमात्मा के प्रति आभार से भर उठता है तथा दया और करुणा से अचंभित हो जाता है। इससे असीम आनंद सहज ही उत्पन्न हो जाता है :

जिन कै मनि साचा बिस्वासु ॥
पेखि पेखि सुआमी की सोभा आनदु सदा उलासु ॥
(पन्ना ६७७)

गुरु साहिब ने परमात्मा के मार्ग पर चलने वाले गुरसिक्ख के आनंद की निराली व्याख्या की और उसे सांसारिक आनंद से भिन्न किया। गुरु साहिब ने कहा कि यह आनंद इसलिए नहीं है कि गुरसिक्ख परमात्मा के मार्ग पर चलने का बड़ा कार्य कर रहा है। इससे अहं भी उपज सकता है। यह आनंद तो परमात्मा के प्रति सच्चा विश्वास धारण करने से और उसके विराट एवं सर्व-मंगल स्वरूप की शोभा देख-देखकर पैदा होता है। परमात्मा की महिमा को देखना ही आनंद को पाना है :

तिन्ह बसंतु जो हरि गुण गाइ ॥
पूरै भागि हरि भगति कराइ ॥ *(पन्ना ११७६)*

गुरसिक्ख प्रभु के अपार गुण-गायन में लीन होकर सदैव बसंत के आनंद को प्राप्त

करता है। इससे उसका जीवन जीने का ढंग बदल जाता है। उसे होली का आनंद रंग उछालने और व्यंजन खाने में नहीं आता। वह ईश्वर की अनुकूलता को प्राप्त करने के निराले ढंग अपनाता है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने होली का त्योहार नए ढंग से मनाना आरंभ किया और नया नाम दिया-- 'होला-महल्ला।' इन दिनों में सुबह से ही गुरबाणी के दरबार लगाये जाते और कवि, ढाडी आदि अपनी गायन-कला का प्रदर्शन करते; शबद-कीर्तन होता, बाद में शस्त्र-कौशल दिखाया जाता और कसरत, खेल आदि होते थे। इस दिन गुलाब का सुगंधित जल भी बिखेरा जाता, जिससे माहौल सुगंध से भर उठता था। सिक्खों के समूह बनाकर दिखावटी युद्ध भी कराए जाते जिनमें सिक्ख अपने युद्ध-कौशल और वीरता का प्रदर्शन करते थे। इन युद्ध-प्रतियोगिताओं में जीत का उत्सव भी निराले तरीके से मनाया जाता था। एक बड़े बर्तन में कड़ाह प्रसादि रख दिया जाता था। उसे उपस्थित संगत में बांटा जाता था। गुरु साहिब मन और कर्म दोनों में परमात्मा को जोड़ना सिखाते थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा अपनाया होली का यह ढंग श्री गुरु अरजन देव जी के बताये ढंग के अनुरूप ही था :

आजु हमारै बने फाग ॥
प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥
होली कीनी संत सेव ॥
रंगु लागा अति लाल देव ॥२॥
मनु तनु मउलिओ अति अनूप ॥
सूकै नाही छाव धूप ॥
सगली रूती हरिआ होइ ॥
सद बसंत गुर मिले देव ॥३॥ (पन्ना ११८०)

श्री गुरु अरजन साहिब ने जहां परमात्मा को संगी बनाकर होली खेलने की बात कही वहीं श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी इसमें और वृद्धि कर शबद-कीर्तन के दरबार लगाने की भी शिक्षा दे गए। श्री गुरु अरजन देव जी ने संत-सेवा की बात कही। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसमें शस्त्रों का साथ शामिल कर संत बनने के साथ-साथ सच के पक्ष में दृढ़ता से खड़े होना सिखाया। श्री गुरु अरजन देव जी ने जहां परमात्मा के रंग में डूब जाने को कहा, वहीं श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने प्रभु-रंग में डूब जाने के साथ-साथ प्रभु की कृपा रूपी कड़ाह प्रसादि वितरित करने एवं छकने की हिदायत की। इस प्रकार होला-महल्ला तन-मन से परमात्मा के रंग में सराबोर होने का उत्सव बन गया था। वास्तव में यही गुरसिक्ख की जीवन-पद्धति है और इसी कारण उसका सारा जीवन कभी न कम होने वाले असीम आनंद से भर उठता है।

गुरसिक्ख का विकारों से मुक्त हो जाना, सांसारिक पदार्थों का मोह त्याग देना, परमात्मा की सर्वव्यापकता के दर्शन करना और उसके गुणों में रम कर तन और मन से उन्हें अंगीकार करना ही जीवन-लक्ष्य है, जिसमें सच्चे आनंद की अनुभूति समायी होती है। गुरसिक्ख के जीवन में सदा बसंत की प्रफुल्लता है और वह पल-पल परमात्मा-प्रेम के रंगों की होली खेलता है। इतना महान दर्शन और इतना पवित्र आचार रोम-रोम को आहलादित कर देता है। गुरमति ऐसी जीवन-पद्धति है कि इसकी महानता के आगे खुद को बार-बार बलिहार जाने से रोक पाना असंभव हो जाता है। यह जीवन, इस जीवन की एक-एक सांस गुरु साहिबान को समर्पित, जिन्होंने हमें ऐसी महान एवं विलक्षण जीवन-पद्धति अपनाने का उपदेश दिया।



होली से होला-महल्ला

-ज्ञानी सुरजीत सिंघ

होली भारत का एक मिथिहासिक एवं पौराणिक त्योहार है। इसका मूल सम्बंध हिंदू मत द्वारा प्रचलित वर्ण-विभाजन से है। होला-महल्ला का आरंभ श्री अनंदपुर साहिब में लोहगढ़ के स्थान पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने किया। इन दोनों त्योहारों की विचारधारा के पक्ष से आपस में भिन्नता है। गुरु-घर में गुरु की संगत के लिए जहां होली को इसके प्रचलित ढंग से खेलने से पूरी तरह से मनाही है, वहीं इसको नये तथा सुलझे रूप 'होला-महल्ला' के सिद्धांत के रूप में पेश किया गया है। पंथ के महान विद्वान भाई कान्ह सिंघ नाभा के अनुसार युद्ध-विद्या के अभ्यास को नित्य नया रखने के लिए कलगीधर पातशाह की चलायी हुई रीति के अनुसार चेत वदी १ को सिक्खों में 'होला-महल्ला' होता है।

होला-महल्ला का होली की रस्म से कोई सम्बंध नहीं है। महल्ला एक प्रकार की मसनूई (बनावटी) लड़ाई है। पैदल, घुड़सवार तथा शस्त्रधारी सिंघ दो दिशाओं से खास हमले की जगह पर एक-दूसरे पर हमला करते हैं। संगत इस बनावटी लड़ाई को देखती है। जो दल विजयी होता है उसको सिरोपा बख़्शिश किया जाता है। खेद कि हम वर्ष के बाद यह रस्म नाममात्र कर देते हैं, लाभ नहीं उठाते, जबकि शस्त्र-विद्या से अनजान सिक्ख खालसा पंथ के नियमों के अनुसार अधूरा माना जाता है। इसी विषय पर भाई कान्ह सिंघ नाभा और लिखते हैं, "शोक (खेद) है कि अब सिक्खों ने शस्त्र-विद्या को अपनी कौमी-विद्या नहीं समझा, मात्र फौजियों का कर्त्तव्य मान लिया है, जबकि दशमेश जी का उपदेश है कि हर एक सिक्ख पूरा सिपाही हो तथा शस्त्र-विद्या का अभ्यास करे।"

चाहे कितनी भी लड़ाकू कौम या जत्थेबंदी हो, हर वक्त या हर समय जंगों-युद्धों में नहीं रहती। सरकारी फौजें भी शस्त्रों का प्रयोग किसी शत्रु द्वारा उस पर किए हमले के समय ही करती हैं, हर समय नहीं परंतु उनके युद्ध एवं शस्त्र-अभ्यास कभी भी बंद नहीं किए जाते। छठम पातशाह ने पंथ को बाकायदा शस्त्रधारी किया तथा हकूमत के साथ चार जंगें लड़ीं। चारों में ही आप जी ने फ़तहि हासिल की। गुरगद्दी सौंपने के समय आप जी ने श्री गुरु हरिराय साहिब को २२०० शस्त्रधारी घुड़सवार फौज की सपुर्दगी की तथा साथ ही हुक्म किया कि इन फौजों को बाकायदा कायम रखना है। स्पष्ट है कि अगर फौजों को कायम रखना है तो उनके अभ्यास बाकायदा चलते रहने चाहिए। दशम पातशाह ने कौम के बाकायदा जुझारू होने का एलान कर दिया तथा 'कृपाण' को पांच ककारों में शामिल करके सिक्खी पहनावे का सदैव के लिए अंग बना दिया। फिर यह नियम भी पक्का कर दिया कि सिक्ख शस्त्र-विद्या का अभ्यास करते रहें।

'होला' तथा 'महल्ला' क्रमश: अरबी व फारसी भाषा के शब्द हैं, जिनके अर्थ क्रमश: 'हमला' तथा 'हमले की जगह' हैं। यह भी ठीक है कि चाहे कृपाण को पातशाह ने ककारों की गिनती में सिक्खी पहनावे का पक्का अंग बना

दिया फिर भी जंगों-युद्धों में जो भी उस समय के नये हथियार थे, उनके इस्तेमाल के लिए भी सबसे आगे रहे। हमें आधुनिक हथियारों का प्रयोग तथा अनुशासित पहनावे के रूप में कृपाण के आपसी सम्बंधों को समझना चाहिए।

कृपाण के लिए 'तलवार' तथा 'खड़ग' आदि अनेकों नाम पहले से ही प्रचलित थे। सोचने का विषय है कि पातशाह को यह नया नाम इस शस्त्र के लिए देने की क्या ज़रूरत पड़ी? इस सम्बंध में यह याद रहे कि कृपाण धारण करने वाले को हर पक्ष से हर वक्त चेतावनी मिलती है कि उसने शस्त्रधारी होना है तो किसके लिए? कृपाण का नया शब्द पातशाह ने दो शब्दों-- कृपा+आन की संधि से बख़्शा है अर्थात् गुरु के सिक्ख ने जब कृपाण को हाथ डालना है तो उसके सामने दो बातों में से एक कारण अवश्य होना चाहिए या तो 'कृपा' भाव 'मज़लूम की रक्षा' अथवा 'दुष्ट की सुधाई' के लिए या फिर अपने पंथ, धर्म की आन व शान के लिए।

होला-महल्ला का महत्त्व और भी स्पष्ट हो जाता है, जब हम सिक्खी के मूल सिद्धांत 'देग-तेग फ़तहि' शब्दों के बारे में सोचते हैं। जहां कड़ाह प्रसादि को देग कहा है वहीं साथ ही नियम है कि बिना कृपाण-भेंट के कड़ाह प्रसादि की देग नहीं बांटनी चाहिए और न ही छकनी चाहिए। क्षमा चाहता हूं कि कुछ सज्जन कड़ाह प्रसादि की देग को कृपाण भेंट करने को 'भोग लगाना' समझ लेते हैं। गुरु-घर में भोग लगाने का कोई विधान है ही नहीं। भोग लगाने की प्रथा देवी-देवताओं अर्थात् मूर्ति के पुजारियों की है। गुरु-घर में तो सिक्ख धर्म के मूल सिद्धांत 'देग-तेग फ़तहि' के आधार पर कृपाण भेंट करने का नियम है ताकि गुरसिक्ख तेग (शस्त्र) को भूलकर देग (कड़ाह प्रसादि) के लिए ही न रह जाए। इसलिए जहां हम देग छकने को प्रसाद छकना मानकर गुरु की आज्ञा का पालन करते हैं वहीं हमें तेग अर्थात् शस्त्र धारण करने वाले गुरु-आदेश को भी याद में लाकर शस्त्रधारी बनना चाहिए अर्थात् अमृत छककर तेग-कृपाण सहित पांच ककारों को धारण करना चाहिए। 'गुरबिलास पातशाही दसवीं' के अध्याय २३ में सिक्खों के लिए इस सम्बंधी दशम पातशाह द्वारा दिया हुक्म इस प्रकार है :

पुनं संग सारे प्रभ जी सुनाई। बिना तेग तीरं रहो नाह भाई।
बिना ससत्र केसं नरं भेड जानो। गहे कान ताको कितै लै सिधानो ॥९८॥
इहै मोर आगिआ सुनो लै पिआरे। बिना तेग केसं दिवो न दिदारे।
इहै मोर बैना मंनेगा सु जोई। तिसे इछ पूरं सभै जान सोई ॥९९॥

'रहितनामा' भाई देसा सिंघ में हुक्म है :

शसत्रहीन इह कबहू नहि कोई। रहितवंत खालसा सोई।
कछ क्रिपान न कबहूं तिआगै। सनमुख लरै न रण ते भागै ॥१५॥

'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' की रुत ३, अध्याय २३ के अनुसार दशमेश जी का खालसे को हुक्म है :

शसत्रनि के अधीन है राज। जो न धरहि तिस बिगरहि काज ॥६॥
यां ते सरब खालसा सुनीअहि। आयुध धरिबे उत्तम गुनीअहि।
जबि हमरे दरशन को आवहु। बनि सुचेत तन शसत्र सजावहु ॥७॥
कमर कसा करि देहु दिखाई। हमरी खुशी होइ अधिकाई।

यह सब बताने का मतलब यह साबित करना है कि समकालीन लेखक तथा सभी सिक्ख

इतिहासकार इस बारे में एक मत हैं कि सिक्खों के लिए केशाधारी तथा शस्त्रधारी होना सबसे ज़रूरी है। शस्त्र-अभ्यास को पक्का करने के लिए दशम पातशाह ने होला-महल्ला का त्योहार खुद आरंभ किया। जहां गुरसिक्ख की कड़ाह प्रसादि को कृपाण भेंट करने, देग के साथ सांझ रखने के साथ-साथ शस्त्रों के साथ सांझ बनाए रखना ज़रूरी है वहीं हर वर्ष आने वाला होला-महल्ला उसको शस्त्र-अभ्यासी बने रहने की भी याद दिलाता है। शस्त्रधारी फौजों का भी यही नियम होता है। युद्धों के समय यह शस्त्र-अभ्यास रूपी तैयारी ही उनके युद्ध का असल आधार होती है। होला-महल्ला का भी यही मतलब है।

मात्र शस्त्रधारी होना भी किसी वक्त मनुष्य को ज़ालिम बना सकता है परंतु जब उसे जीवन की घुट्टी गुरबाणी से मिली हो, सारे शस्त्रों की पहचान उसको कृपाण से मिलना आरंभ हो, जिसका मतलब ही उसके लिए मज़लूम की रक्षा करना तथा गर्व से जीना है तो ज़ालिम होने की संभावना ही खत्म हो जाती है। फिर उसको इसके बारे में दशम पातशाह की बाकायदा हिदायत भी है :

चु कार अज़ हमह हीलते दरगुज़शत ॥
हलाल असत बुरदन बशमशीर दसत ॥ (ज़फरनामा)

अर्थात् हथियार का प्रयोग तभी जायज़ है जब अन्य सभी प्रयास असफल हो जाएं।

आज हालात ये हैं कि सिक्ख पंथ का बड़ा हिस्सा अमृत छकने से वंचित है। अमृत छक कर ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु धारण किया जा सकता है। बिना गुरु (श्री गुरु ग्रंथ साहिब) धारण किए तो सिक्ख नहीं बना जा सकता। ऐसे लोग अमृत से वंचित होकर पांच ककार धारण करने से भी लापरवाह होते गए।

यदि पहले हम अमृतधारी, फिर शस्त्रधारी होने से लापरवाह हो गए तो हमें होला-महल्ला की समझ नहीं आ सकती। जहां सिक्ख है वहीं होला-महल्ला का त्योहार भी ज़रूरी है। चाहे पातशाह ने इसको श्री अनंदपुर साहिब के लोहगढ़ साहिब से ही आरंभ किया है, मगर इसका महत्त्व समझना हम सबके लिए अति आवश्यक है।

होली : होली एक मिथिहासिक एवं पौराणिक त्यौहार है। हिंदू मत में किए गए वर्ण-विभाजन के अनुसार ब्राह्मण वर्ग ने अपने लिए वैसाखी का त्योहार निश्चित कर वैश्यों के लिए दीवाली, क्षत्रियों के लिए दशहरा तथा शूद्रों के लिए होली का त्योहार प्रचलित किया। मूल रूप में यह ब्राह्मणी त्योहार है।

पौराणिक कथा के अनुसार अहंकारी राजा हिरण्यकशिपु को अभिमान था कि काल उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता। ऐसे में वो ज़ालिम बन गया। उसने एलान किया कि कोई परमात्मा का नाम न जपे, सभी उसका यश-गान करें। परमात्मा की कृपा, घर में से ही हिरण्यकशिपु का पुत्र भक्त प्रहलाद इस बात का विरोधी हो गया तथा वह हरि-नाम जपने एवं जपाने लगा। राजा ने उसको हर ढंग से खत्म करने का प्रत्यन किया परंतु परमात्मा ने उसकी हर बार रक्षा की। अंततः हिरण्यकशिपु के कहने पर उसकी बहन होलिका अपने भतीजे को गोद में लेकर चिखा पर बैठ गई। परमात्मा की कृपा होलिका जलकर राख हो गयी और भक्त प्रहलाद बच गया। आखिर समय आ गया कि हिरण्यकशिपु को काल ने अपनी आगोश में ले लिया और भक्त प्रहलाद की जय-जयकार हुई। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इस सम्बंधी ज़िक्र श्री गुरु अमरदास जी की बाणी (पन्ना ११३३) तथा भक्त नामदेव जी की बाणी (पन्ना ११६५) में आता है। इससे यह समझना चाहिए कि मनुष्य चाहे

कितना भी ज़ालिम या अहंकारी हो जाए, प्रभु अपने भक्तों की सदा लाज रखता है।

होली के त्योहार के लिए इस घटना को आधार बनाकर रात को होली जलाई जाती है तथा राख को होलिका की राख मानकर सुबह उसको उड़ाया जाता है। होली को मनाने के ढंग में और भी बिगाड़ तब से आया जब से लोग एक-दूसरे पर कीचड़, गोबर एवं गंदगी फेंककर इस त्योहार को गलत ढंग से मना रहे हैं। शराब का दौर चलता है। अन्य कई प्रकार के नशों का सेवन एवं वितरण होता है। परिणामस्वरूप लड़ाई-झगड़े होते हैं, कत्ल तक हो जाते हैं। महिलाओं के साथ अभद्र व्यवहार किया जाता है।

सिक्ख धर्म में होली का त्योहार ऐसे ढंग से मनाना पूरी तरह से विर्जित है। श्री गुरु नानक देव जी के बख़्शे सुंदर केशधारी स्वरूप का अपमान करने या करवाने की हमें कोई अनुमति नहीं। होली मनाने के इस ढंग से गुरमति बिलकुल सहमत नहीं है।

विशेष रूप से होली के दिनों में गुरु नानक पातशाह मथुरा, जो होली मनाने या खेलने का बड़ा केंद्र माना जाता है, में पहुंचे। वहां आप ने इस महान त्योहार के बहाने लोकाई में खेले जा रहे असभ्य खेलों से लोगों को मना किया तथा समझाया। पंडितों ने इसको 'कलयुग' का प्रभाव बताया। पातशाह ने *"सोई चंदु चड़हि से तारे सोई दिनीअरु तपत रहै ॥"* वाले शबद द्वारा समझाया कि सतयुग, त्रेता, कलयुग आदि समय की कोई बांट नहीं है। इस तरह से तथाकथित कलयुग का परदा डालकर धार्मिक अगुआ या जनसाधारण अपने दोषों से बरी नहीं हो सकते। *"नानक नामु मिलै वडिआई एदु उपरि करमु नहीं ॥"* के अनुसार नाम-सिमरन एवं शुभ कर्मों के द्वारा मनुष्य नेक-परोपकारी मनुष्य बने तथा अपने जीवन को सफल बनाए। प्रत्येक गुरसिक्ख को यह शब्द पढ़ना एवं समझना चाहिए।

पंचम पातशाह ने होली के बहाने अपने मुंह-सिर रंगने वाले लोगों को उपदेश दिया है :

गुरु सेवउ करि नमसकार ॥
आजु हमारै मंगलाचार ॥
आजु हमारै महा अनंद ॥
चिंत लथी भेटे गोबिंद ॥१॥
आजु हमारै ग्रिहि बसंत ॥
गुन गाए प्रभ तुम बेअंत ॥१॥रहाउ॥
आजु हमारै बने फाग ॥
प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥
होली कीनी संत सेव ॥
रंगु लागा अति लाल देव ॥२॥ *(पन्ना ११८०)*

अर्थात् जब जीव प्रभु-प्यार में रंग जाता है तो मानो उसके घर सदा ही आनंद व बसंत ऋतु बनी रहती है। इसलिए दुनिया के लोगो! अगर आपने फाल्गुन के महीने में होली का आनंद मानना है तो प्रभु-भक्तों की संगत में आओ, तब नाम की मस्ती वाला 'पक्का लाल रंग' आपके मन पर चढ़ेगा। यही हमारे लिए उत्तम होली होनी चाहिए।

गुरु साहिबान ने होली मनाने को मूल रूप से मना नहीं किया बल्कि उसके अर्थ को सही मायने में प्रस्तुत कर सही ढंग से मनाने की सीख दी। उन्होंने मानव को सभ्य से असभ्य बनाने वाली रीति को त्यागकर सभ्य बने रहने वाली रीति दृढ़ करवाई और रंगों के इस त्योहार को प्रभु-रंग का स्पर्श प्रदान किया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस त्योहार को 'होला-महल्ला' नाम प्रदान कर इसे पूर्ण रूप से आध्यात्मिक रंग से ओत-प्रोत कर दिया।

अनुवादक : स. गुरप्रीत सिंघ भोमा



होली का संवरा रूप होला-महल्ला

*-डॉ. अमनदीप सिंघ**

बसंत की ऋतु शुरू होने से ही सर्दी का प्रभाव कम होने लगता है। झड़ चुके वृक्ष पुन: हरे-भरे होने शुरू होते हैं। रंग-बिरंगे पतंग आसमान में उड़ते दिखाई देते हैं। कोहरे की लपेट में आया सूर्य भी चमक आता है, खेतों में खड़ी सरसों के पुष्प तथा गेंदे के खिल रहे सुनहरी पुष्प इस ऋतु में चार चाँद लगाते हैं। इसी खिली ऋतु में आता है रंगों का त्योहार-- होली।

कहा जाता है कि इस दिन राजा हिरण्यकशिपु ने भक्त प्रहलाद को अपनी बहन होलिका की गोद में बैठाकर जलाने की कोशिश की। होलिका जल गई किंतु भक्त प्रहलाद बच गया। परमात्मा के भक्त की लाज रखने सम्बंधी ज़िक्र गुरबाणी में भी आता है :

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ पैज रखदा आइआ राम राजे ॥
हरणाखसु दुसटु हरि मारिआ प्रहलादु तराइआ ॥
(पन्ना ४५१)

उसी दिन से ही होली का त्योहार पूरे भारत में हर वर्ष मनाया जाने लगा। धीरे-धीरे इस त्योहार को मनाने में गिरावट आना शुरू हो गयी। त्योहारों की बांट वर्णों की बांट के मुताबिक कर दी गयी, जिसके अनुसार वैसाखी तथाकथित ब्राह्मणों के नाम, दशहरा तथाकथित क्षत्रियों का, दीवाली तथाकथित वैश्यों की और तथाकथित शूद्रों के हिस्से में होली आई। होली का त्योहार रंगों की जगह शराब पीने तथा तथाकथित शूद्रों की बेइज्ज़ती करने का बन गया। समय बदला। इस आई गिरावट को दूर करने के लिए तथा दबाए जा रहे लोगों को मान-सम्मान दिलाने के लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस त्योहार को न सिर्फ नये रंगों में ही रंगा बल्कि लोगों को स्वाभिमान से जीने की जाच भी सिखाई। जिन लोगों को आशा नहीं थी कि उनके हाथों में शस्त्र होंगे, उन्होंने बहुत ही जोश के साथ तेगों के मुट्ठों को हाथ डाला। पहले तो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने लोगों में नयी भावना जागृत करने के लिए 'होली' नाम बदलकर 'होला' रखा, जिस तरह पहले कई चीज़ों के नाम बदले थे। फिर शब्द 'महल्ला' साथ लगाकर इसको 'होला-महल्ला' का नाम दिया गया। 'होले' का अर्थ है-- हल्ला, हमला। 'महल्ला' उस जगह को कहा जाता है, जिसको जीतकर वहां आसन लगाया जाए।

इस रीति को कायम रखने के लिए दशमेश पिता ने किला होलगढ़ की स्थापना की तथा होला-महल्ला के त्योहार को अपनी देख-रेख में मनाना शुरू किया। सिंघों की फौजा के दो दल बना लिए जाते थे। एक दल ने केसरी वस्त्र पहने होता थे तथा दूसरे दल ने सफेद वस्त्र पहनते होते थे। एक दल किला होलगढ़ की रक्षा करता तथा दूसरा दल उस पर हमला करता। जीतने वाले दल को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अपने हाथों से ईनाम देते। ये बनावटी युद्ध करने उस समय की ज़रूरत बन चुकी थी।

गुरु साहिब एक बहुत बड़े मनोविज्ञानी भी

**चढ़दी कला निवास, बाबा फ़रीद नगर, कचहरी चौंक, बरनाला (पंजाब), मो: ९८१४६-९९४४६*

थे। वे जानते थे कि जो लोग इस बनावटी युद्ध में भाग लेंगे या इस युद्ध को देखेंगे, उनके हौसले और भी बुलंद होंगे। यह गुरु साहिब की सोच ही थी, जिन्होंने बड़े सुंदर तरीके से लोगों को जीने का ढंग सिखाया।

आज भी हर वर्ष होला-महल्ला के दिन श्री अनंदपुर साहिब में भारी जोड़मेला लगता है। तैयार-बर-तैयार हुए निहंग सिंघ किला अनंदगढ़ साहिब के आगे गुरुद्वारा साहिब शहीदी बाग से एक नगर कीर्तन आरंभ करते हैं। गतका खेलते, गुलाल की वर्षा करते हुए निहंग सिंघ गुरु-स्थानों पर नत्मस्तक होने के उपरांत खुले स्थान में अपनी कला के जौहर दिखाते हुए होले की समाप्ति करते हैं। यह दृश्य बहुत मनमोहक होता है। पाउँटा साहिब की पावन धरती पर भी बड़ी शानो-शौकत से होला-महल्ला मनाया जाता है।

प्रत्येक त्योहार की अपनी विशेषता है। त्योहार के दिनों में लोगों के चेहरों पर रौनक तथा खुशी दोगुनी-चौगुनी झलकती है। होला-महल्ला इस बात का प्रतीक है कि खुश रहने के लिए केवल भौतिक वस्तुओं या बाहरी रंगों की ही ज़रूरत नहीं होती बल्कि अंदरूनी खुशी का होना भी बहुत आवश्यक है।

रंग जहां अपनी महक से लोगों के चेहरों को महकाते हैं, वहीं इन रंगों में रंगे लोग सारे भेदभाव भुलाकर एक-दूसरे का आलिंगन करते हैं। कितना अच्छा हो अगर ये प्यार के रंग हम एक-दूसरे पर छिड़कते रहें और नफ़रत की चल रही आंधी को रोक पाएं। ऐसे में बदी पर नेकी की विजय हो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा सृजित खालसा पंथ की हर मैदान में फ़तहि होगी।



गुरु-घर के अनन्य सेवक भाई मरदाना जी

(पृष्ठ १२ का शेष)

गुरु जी के चरणों में अपना शीश रख विनम्र निवेदन किया कि "इस नश्वर शरीर को त्यागने का अकाल पुरख से बुलावा आ गया है, इसलिए मुझे विदा कीजिए।" गुरु जी ने अपने परम मित्र भाई मरदाना जी को गले लगा लिया। *"गुरमुखि जनमु सवारि दरगह चलिआ"* के अनुरूप भाई मरदाना जी ने अपना भौतिक शरीर गुरु जी की गोद में त्याग दिया। भाई साहिब के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार श्री गुरु नानक देव जी ने स्वयं अपने कर-कमलों द्वारा खुरम नदी के किनारे किया।

भाई मरदाना जी के वंशज गुरु-घर में कीर्तन करने की परंपरा का निर्वाह निरंतर जारी रखते रहे। श्री गुरु अंगद देव जी के दरबार में भाई मरदाना जी के सुपुत्र भाई सजादा जी कीर्तन कर गुरु जी के आशीर्वाद का पात्र बने रहे हैं। भाई मरदाना जी को गुरु-घर का प्रथम कीर्तनिया होने का गौरव प्राप्त है। उनका सिक्ख इतिहास में मान-सम्मान हमेशा बना रहेगा।



होली के दिन बब्बर अकालियों की शहीदी

-*सिमरजीत सिंघ**

भारत को अंग्रेजी हकूमत से आज़ाद करवाने में 'बब्बर अकाली लहर' की अहम भूमिका है। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान गदरी स्वतंत्रता संग्रामियों द्वारा किया गया प्रयत्न सिरे न चढ़ सका। परंतु इस लहर ने पंजाबियों के मनों में अंग्रेजों से आज़ाद होने के लिए जागृति पैदा कर दी थी। इस लहर ने पंजाबियों को अपनी पृष्ठभूमि याद करवा दी तथा देश-कौम पर मर-मिटने की सोई हुई गौरवता को जगा दिया था। पंजाबियों ने अपने देश के लिए दोबारा कुर्बानियों की झड़ी लगा दी।

सन् १९१४ ई में अंग्रेजों ने दिल्ली में एक अंग्रेज के घर को जाने वाली सड़क को सीधा करने के लिए गुरुद्वारा श्री रकाबगंज साहिब की दीवार तोड़ दी। अंग्रेजों की इस घिनौनी कार्यवाई का सिक्खों ने बढ़-चढ़कर विरोध किया। इसके बाद कामागाटामारू जहाज़ पर हमला करके भारतीयों को यह एहसास करवा दिया कि वे अंग्रेजों के गुलाम हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अंग्रेजों ने भारतीयों की शूरवीरता को देखते हुए उनको ज्यादा-से-ज्यादा फौज में भर्ती कर लिया। पंजाबियों के मन में यह बात बैठा दी कि जंग फ़तहि हो जाने के बाद अंग्रेजों का रवैया उनके प्रति हमदर्दी वाला हो जाएगा। जंग फ़तहि हो जाने के बाद पंजाबियों के सारे सपने टूट गए, जब अंग्रेजों का रवैया बिल्कुल विपरीत हो गया। भारतीयों के लिए रोल्ट एक्ट जैसे अमानवीय कानून पास करके आज़ादी की आशा को ख़त्म करने के प्रयत्न शुरू हो गए। पंजाबियों ने इसका डटकर विरोध किया। इसके परिणामस्वरूप जलियां वाला बाग का शहीदी साका घटित हुआ।

इन दिनों गुरुद्वारा साहिबान का मामला सामने आया। गुरुद्वारा साहिबान का प्रबंध अंग्रेजों के पिट्ठू महंतों के हाथों में था। इन महंतों ने सिक्ख रहित मर्यादा के उल्ट काम करने शुरू कर दिए। सिक्खों में गुरुद्वारा साहिबान को इन भ्रष्ट महंतों से आज़ाद करवाने के लिए लहर चल पड़ी। महंतों से गुरुद्वारा साहिबान को आज़ाद करवाने वाली लहर देश को आज़ाद करवाने की तरफ चल पड़ी। इसी शृंखला में 'गुरु का बाग' का मोर्चा शुरू हुआ। लोग शांतमयी ढंग से अंग्रेजों की धक्केशाही का विरोध करते हुए गुरुद्वारा साहिब की ज़मीन में से लकड़ियां काटने जाते तो अंग्रेज सरकार का पुलिस अफसर बी. टी. उन पर लाठियों की मार मारता। वह जख़्मी सिक्खों के पास जाकर अभद्र शब्दावली बोलता। चाहे सिक्ख श्री अकाल तख़्त साहिब से शांतमयी रहने का प्रण करके जाते थे परंतु सिक्खों के मन में अंग्रेजों के विरुद्ध रोष बढ़ता जा रहा था। सिक्खों ने हथियारबंद टक्कर लेने का मन बना लिया। चारों तरफ सिक्खों की गिरफ्तारियों का दौर चल पड़ा।

स. किशन सिंघ गड़गज्ज का जन्म जलंधर छावनी के पास गांव बड़िंग में हुआ। इनका

**संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।*

पहला नाम सरफदीन था तथा बाद में खंडे की पाहुल प्राप्त करके सिंघ सज गए थे। इन्होंने फौज में नौकरी करके हवलदार तक तरक्की प्राप्त की। इन्होंने फौज में होते हुए ही देश की आज़ादी के लिए काम करना शुरू कर दिया था। इनके साथ ज़िला लुधियाना के गांव छोटी हरिउ के स. संता सिंघ भी फौज से नाम कटवाकर आकर मिल गए। स. संता सिंघ ने स. किशन सिंघ को खालसा हाई स्कूल जलंधर के छात्रों को साथ मिलाकर उनके अंदर देश-भक्ति की भावना भरनी शुरू कर दी। इनके साथ ज़िला होशियारपुर के गांव धामियां कलां के स. दलीप सिंघ भी आ मिले। स. दलीप सिंघ महंतों द्वारा गुरुद्वारा साहिब में किए जाते कुकर्मों से दुखी थे। इन्होंने गुरुद्वारा साहिबान को अंग्रेजों के पिट्ठू महंतों से आज़ाद करवाने के लिए मर-मिटने का प्रण किया हुआ था। ये अपना प्रण पूरा करने के लिए स. किशन सिंघ गड़गज्ज के पास आ गए। ज़िला जलंधर के ही गांव घुड़ियाल के स. नंद सिंघ के मन पर जलियांवाला बाग के साके का बहुत प्रभाव पड़ा। इस साके ने उनके मन में अंग्रेजों के प्रति घोर नफ़रत पैदा कर दी। इन्होंने रोष के रूप में नौकरी छोड़ दी तथा सिंघ सजकर ना-मिलवर्तन लहर में शामिल हो गए। इन्होंने गुरु का बाग के मोर्चे में बढ-चढ़कर हिस्सा लिया। बब्बर अकाली लहर के प्रचार से प्रभावित होकर यह बब्बर अकाली लहर में शामिल हो गए।

१९ मार्च से २१ मार्च, १९२१ ई. तक होशियारपुर में सिक्ख एजुकेशन कान्फ्रेंस हुई। इस कान्फ्रेंस में मास्टर मोता सिंघ (पतारा), जत्थेदार किशन सिंघ (बड़िंग), भाई वतन सिंघ (काहरी) तथा अन्य मुख्य अधिकारियों ने एक अलग से मीटिंग करके श्री ननकाणा साहिब वाले साके में शहीद किए गए सिंघों का बदला लेने का मता पकाया किंतु यह मता सिरे न चढ़ सका क्योंकि जिनको यह काम सौंपा गया था वो २३ मई, १९२१ ई को गिरफ्तार कर लिए गए थे। मास्टर मोता सिंघ एवं स. किशन सिंघ गड़गज्ज रूपोश हो गए। इन्होंने आज़ादी की लहर को आगे बढ़ाने के लिए पहले विचार किया कि गदर लहर के सिरे न चढ़ने का एक कारण यह था कि गदरियों को आम लोगों का मिलवर्तन नहीं मिल सका था। इसलिए आज़ादी की लहर को सिरे चढ़ाने के लिए आम लोगों का मिलवर्तन ज़रूरी था। योजना यह तैयार की गई थी कि लोगों में प्रचार के लिए एक जत्था तैयार किया जाए जो मौका आने पर हथियार चलाने में भी निपुण हो। सरकार के नुमाइंदों को डरा-धमकाकर समझाया जाए। इस तरह नवंबर, १९२१ ई. में स. किशन सिंघ गड़गज्ज ने अपना एक गुप्त जत्था तैयार किया। उसका नाम 'चक्रवती जत्था' रखा गया। इस जत्थे ने गांव-गांव जाकर प्रचार करना शुरू कर दिया। ये जिस गांव में जाकर जलसा करते थे, उस गांव में ठहराव नहीं करते थे, आराम अगले गांव में जाकर करते थे। इस तरह दिन-रात प्रचार शुरू हो गया। पुलिस जब गुप्त सूचना मिलने पर पंहुचती तो जत्था अगले गांव में जा चुका होता था। फरवरी, १९२२ ई में घड़ियाल गांव में दीवान सजाया गया। यहां स. किशन सिंघ गड़गज्ज तथा स. संता सिंघ ने प्रभावशाली तकरीरें कीं। इन तकरीरों से प्रभावित होकर गांव हरीपुर के स. करम सिंघ भी इनके साथ मिल गया। होशियारपुर में स. करम सिंघ दौलतपुरिए ने भी अपना एक जत्था कायम कर लिया। अगस्त, १९२२ ई में इन्होंने अपने जत्थे को भी चक्रवती जत्थे में शामिल कर दिया तथा

नये जत्थे का नाम रखा-- 'बब्बर अकाली जत्था'। इस जत्थे का जत्थेदार स. किशन सिंघ गड़गज्ज को बनाया गया।

ज़िला होशियारपुर के गांव माहलपुर में मास्टर मोता सिंघ ने एक भारी तकरीर की। पुलिस को मालूम पड़ गया तो मास्टर जी के वारंट जारी हो गए। मास्टर जी को इस तरह जेल जाना मंजूर नहीं था। वो रूपोश हो गए तथा गांव-गांव जाकर अपना प्रचार जारी रखा। बब्बर अकालियों ने आज़ादी की लहर को घर-घर पहुंचाने के लिए एक पर्चा छापकर लोगों तक पहुंचाने की योजना तैयार की। इस पर्चे का नाम 'बब्बर अकाली दोआबा' रखा गया। इस पर्चे की संपादना का काम स. करम सिंघ दौलतपुर ने संभाला। इस पर्चे के सबसे ऊपर लिखा होता था :

सूरा सो पहिचानीए जो लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू ना छाडै खेतु ॥

शुरू-शुरू में स. दलीप सिंघ धामियां ने बब्बर अकाली लहर के अख़बार बांटने एवं सूचनाएं पहुंचाने का काम बड़ी जिम्मेदारी से किया। इस पर्चे द्वारा देश-वासियों को गुलामी के विरुद्ध प्रेरित किया जाता था। गुरुद्वारा किशनपुर, जसोवाल, कोट फतूही में इस पर्चे की छपाई की जाती थी।

ज़िला होशियारपुर में कोट फतूही बब्बर अकालियों का गढ़ बन गया। वहीं बहुत बार प्रचार के दौरान जब मुख्य लीडर बोलते तो पुलिस को सूचना मिलने पर भी पुलिस डरती उधर नहीं आती थी। अगर आ भी जाती तो पंडाल में बैठे सारे लोग उठ खड़े होते और शोरगुल में बब्बर अकाली हरन हो जाते। बब्बर अकालियों के जत्थे ने अब तक प्रचार करके देश की आज़ादी की भावना घर-घर पहुंचा दी। एक बार कोट फतूही में भारी दीवान सजा। पुलिस को सूचना मिलने पर पुलिस ने चारों ओर घेरा डाल लिया। मास्टर मोता सिंघ ने अपनी भारी तकरीर की। आखिर में अध्यक्ष साहिब की आज्ञा से सभी श्रोता उठ खड़े हुए। इस समय मास्टर जी कहां गए, किसी को पता ही न चल सका, पुलिस हाथ मलती रह गई। इस प्रकार मास्टर जी डेढ़ साल पुलिस के साथ आंख-मिचौनी खेलते रहे परंतु एक दिन उनके ही एक साथी ने धोखा देकर पकड़वा दिया।

लोगों में प्रचार ने काफी असर किया। आम लोग आज़ादी के लिए तैयार हो चुके थे। सरकार भी बब्बर अकालियों की गतिविधियों से घबराई हुई थी। अंग्रेज सरकार द्वारा जत्थे के अगुओं की गिरफ्तारी के लिए ईनामों की घोषणा की जा रही थी। सरकार अंधाधुंध पैसा खर्च कर एजंट भर्ती कर रही थी। बब्बर अकालियों द्वारा भी सरकारी गुप्तचरों तथा पिट्ठुओं को अपनी गलत हरकतों से बाज़ आने की चेतावनी दी जा रही थी। लोग भी इन पिट्ठुओं से तंग आ चुके थे तथा बब्बर अकालियों को इनको सोधने की सलाह देते थे। इसी योजना के दौरान पिट्ठुओं को सोधने का काम शुरू हो गया। जहां भी कहीं किसी पिट्ठू का कत्ल होता तो उस गांव और पास वाले गांव के बेगुनाहों को पुलिस यातनायें देने में कोई कोर-कसर न छोड़ती। बब्बर अकालियों ने फैसला किया कि उनके द्वारा किए गए कामों की सज़ा आम लोगों को नहीं मिलनी चाहिए। जत्थे के अगुओं ने फैसला किया कि आगे से जब भी किसी पिट्ठू को सोधा जाए तो तीन आगू अपने नाम का एलान किया करेंगे कि यह काम उन्होंने किया है।

पहली बारी स. करम सिंघ बहिबलपुर तथा स. उदै सिंघ रामगढ़ के नामों का एलान किया

गया। अंग्रेज सरकार में उथल-पुथल मच गई। जलंधर एवं होशियारपुर ज़िलों में हालात यह हो गए कि अंग्रेज अफ़सर अपने साथ २०० घुड़सवार अंगरक्षक लेकर ही बाहर निकलते थे। पुलिस में इतनी दहशत फैल गई कि अगर किसी बब्बर अकाली की सूचना मिलती तो उसको गिरफ्तार करने से पूर्व किसी न किसी को लालच देकर बब्बर अकालियों के हथियार नकारा कर दिए जाते या इधर-उधर कर दिए जाते।

१४ फरवरी, १९२३ ई को स. उदै सिंघ ने पुलिस के मुखबर हैय्यतपुर गांव के दीवान को मार डाला। २७ मार्च, १९२३ ई को स. करम सिंघ दौलतपुर एवं स. उदै सिंघ ने बहिबलपुर के मुखबर हज़ारा सिंघ का कत्ल कर दिया। इसी तरह और कई पुलिस के मुखबरों तथा देश के गद्दारों को सोधने का काम शुरू हो गया। एक दिन चार बब्बर अकाली शूरवीर कपूरथला रियासत के गांव बमेली के पास से गुज़र रहे थे तो एक गुप्तचर ने पहचानकर पुलिस के पास ख़बर पहुंचा दी। पुलिस ने पीछा करना शुरू कर दिया। ये चारों गुरुद्वारा चौंता साहिब में पहुंच गए तो पुलिस ने इन पर गोलीबारी शुरू कर दी। गुरुद्वारा साहिब के चारों तरफ पानी का एक नाला था। ये चारों शूरवीर पुलिस का मुकाबला करते हुए नाले के पास पहुंच गए। कुछ देर मुकाबला करने के बाद स. उदै सिंघ तथा स. महिंदर सिंघ पानी में गिर गए। इस समय स. करम सिंघ ने पुलिस का ध्यान अपनी ओर केंद्रित कर लिया। स. बिशन सिंघ जो नाले के किनारे पर थे, मौका पाकर झाड़ियों में जा छिपे। झाड़ियों के हिलने पर पुलिस को शक हुआ तो कुछ सिपाहियों को झाड़ियां देखने के लिए भेजा गया। सिपाहियों के पास आते ही स. बिशन सिंघ ने अपनी कृपाण से हल्ला बोल दिया। एक सिपाही बुरी तरह जख़्मी हो गया। इतने में एक अन्य सिपाही ने निशाना बांधकर स. बिशन सिंघ पर गोली चला दी। गोली लगते ही स. बिशन सिंघ भी अपने दूसरे तीन साथियों की तरह नाले में गिर गए।

१२ अप्रैल, १९२३ ई को स. करम सिंघ दौलतपुर, स. धंना सिंघ बहिबलपुर, स. उदै सिंघ रामगढ़ झुंगीआ, स. संता सिंघ हरिउ, स. नंद सिंघ घुड़ियाल तथा स. करम सिंघ हरीपुर ने पिट्ठू सूबेदार गेंदा सिंघ को कत्ल कर दिया। इसी तरह बब्बर अकालियों ने बहुत-से सरकारी पिट्ठुओं तथा देश-द्रोहियों का कत्ल कर दिया। पुलिस चारों ओर बब्बर अकालियों को ढूंढने लगी। बहुत-से बब्बर अकालियों को गिरफ्तार कर लिया गया।

एक बार स. किशन सिंघ गड़गज्ज रुड़की कलां में गए तो उनके साथ एक नौजवान भी था। इन पर पुलिस ने हमला कर दिया। नौजवान जख़्मी होने के कारण वहीं पकड़ा गया। स. किशन सिंघ अपने हथियारों की मदद से वहां से निकलने में सफल हो गए। इनकी रास्ते में एक साधु से मुलाकात हुई। उस साध ने आपको बातों में लगाकर भरोसा बना लिया। यह साध जड़ी-बूटियां लाने के बहाने पुलिस को बुला लाया तथा स. किशन सिंघ गड़गज्ज को गिरफ्तार करवा दिया। यह साध सी. आई. डी. महकमे का सब-इंस्पेक्टर था।

९८ बब्बर अकालियों का मुकद्दमा २४ सितंबर, १९२३ ई को स्पेशल मैजिस्ट्रेट बुलाकर अदालत सेंट्रल जेल लाहौर में पेश हुआ। मुकद्दमे की कार्यवाई २८ सितंबर, १९२३ ई. को शुरू हुई। मुकद्दमे का इंचार्ज मीर फज़ल इमामा डिप्टी सुपरडेंट सी. आई. डी. तथा सरकारी वकील पिंडी दास लाहौर वाला था। इनसे

मनमर्ज़ी का फैसला करवाने के लिए सरकार ने इनको तरक्कियां दे दी थीं। २८ फरवरी, १९२५ ई को इन्होंने फैसला दिया कि ९८ कथित दोषियों में से २ जेल में ही मर चुके हैं। अन्य में से ३४ को बरी कर दिया गया। पांच को फांसी तथा बहुत सारों को कालेपानी की सज़ा सुनाई गई। १२ बब्बर अकाली स. सुरजण सिंघ हियातपुर, भाई करम सिंघ झिंगड़, स. दलीप सिंघ धामियां, भाई पिआरा सिंघ धामियां, भाई सुंदर सिंघ मखसूसपुर, भाई करतार सिंघ गोंदपुर, भाई बूटा सिंघ पंडोरी निझरां तथा भाई हज़ारा सिंघ आदि को उम्र-कैद की सज़ा सुनाई गई। भाई मुनशा सिंघ तथा भाई लाभ सिंघ जस्सोवाल को १४-१४ वर्ष कैद की सज़ा सुनाई गई। इनके अलावा अन्य बहुत-से बब्बर अकालियों को ४ से ७ वर्ष तक की कैद की सज़ा सुनाई गई। जब फैसले के विरुद्ध अपील की गई तो फांसी की सज़ा पांच से बढ़ाकर ६ को कर दी गई। यह ६ बब्बर अकाली देश-भक्त थे-- स. किशन सिंघ गड़गज्ज, स. संता सिंघ, स. दलीप सिंघ, स. नंद सिंघ, स. करम सिंघ तथा स. धरम सिंघ। इनकी फांसी की माफी के लिए अपील की गई तो पंजाब के राज्यपाल ने एलान कर दिया कि इनको फांसी अभी नहीं दी जा सकती। इस एलान को आंखों से ओझल करके २७ फरवरी, १९२६ ई को होली वाले दिन जब सारा भारत होली खेलने में मस्त था, उस वक्त भारत के सूबा पंजाब की लाहौर सेंट्रल जेल में ६ बब्बर अकाली देश-भक्तों को फांसी पर चढ़ाकर शहीद कर दिया गया।

इस समय स. भगत सिंघ (शहीद) की उम्र १८ वर्ष थी। इस घटना का उनके मन पर बहुत गहरा असर हुआ। उन्होंने १५ मार्च, १९२६ ई के अख़बार 'परताप' में अपने विचारों से देश-वासियों को झिंझोड़ने के लिए लिखा:-

"२७ फरवरी, १९२६ ई के (होली वाले) दिन जब हम खेलने-कूदने में व्यस्त हुए थे उस समय इस विशाल राज्य के एक कोने में विशाल कांड किया जा रहा था। सुनोगे तो डर जाओगे! कांप उठोगे!! लाहौर सेंट्रल जेल में ठीक उस समय ६ बब्बर अकालियों को फांसी पर लटका दिया गया . . .। ये निडर देश-भक्त थे। इन्होंने जो कुछ भी किया था, इस अभाग्यहीन देश के लिए ही किया था। वो अन्याय न सहन कर सके। निर्बलों पर किए जाने वाले जुल्म उनके लिए असहनीय हो गए। आम लोगों की लूट-खसूट उनको बर्दाश्त न हुई। उन्होंने ललकारा और कूद पड़े कर्म-क्षेत्र में। वे सजीव थे, सतर्क थे। कर्म-क्षेत्र में जूझने वाले . . .।"





शहीद भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज़ सिंघ

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल**

गुरु साहिबान का सारा संघर्ष शोषित-पीड़ित मानवता के अधिकारों की रक्षा के लिए रहा है। पंचम एवं नवम् पातशाह ने आत्म-बलिदान देकर साधारण जन में भी अपने अधिकारों के प्रति अद्‌भुत जागरूकता उत्पन्न कर दी। आम आदमी अपने सम्मान के लिए कुछ भी करने को तैयार हो गया। मानवाधिकारों के प्रति संवेदना इतनी बढ़ी कि उच्च-पदस्थ एवं सुविधा-भोगी वर्ग के लोग भी आत्म-सम्मान के लिए सर्वस्व त्याग देने के लिए कटिबद्ध हो गए।

भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज़ सिंघ का प्रसंग इसी संदर्भ में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। लाहौर मुगल दरबार में ऊंचे ओहदे पर रहते हुए भी भाई सुबेग सिंघ ने अपने मानवाधिकारों से कोई समझौता नहीं किया और पुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ के साथ 'चरखड़ी' पर चढ़कर शहादत प्राप्त की।

संतुलित व्यक्तित्व के स्वामी : भाई सुबेग सिंघ लाहौर ज़िले की तहसील चूणीआं के गांव जंबर के रहने वाले थे। आप उच्च शिक्षा प्राप्त एवं फारसी के विद्वान थे। प्रारंभ में आप सरकारी ठेकेदार थे। भाई साहिब के पुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ भी अपने पिता की तरह बुद्धिमान, परिश्रमी और संतुलित व्यक्तित्व वाले थे। लाहौर का सूबेदार ज़करिया ख़ान सिक्खों का घोर विरोधी होने के बावजूद पिता-पुत्र की बहुत इज़्ज़त करता था। भाई सुबेग सिंघ जहां मुगल दरबार के विश्वास-पात्र थे, वहीं सिक्खों में भी उनका बेहद सम्मान किया जाता था।

'वकील' के रूप में : बाबा बंदा सिंघ बहादर की शहादत के बाद से भी सिक्खों का दमन जारी था। सिक्खों के सिरों का इनाम रख दिया गया था परंतु फिर भी सिक्खों का संघर्ष निरंतर और भी मारक एवं प्रभावशाली होता चला जा रहा था। सन् १७३३ ई में ज़करिया ख़ान ने अपनी दमन-नीति को बदलते हुए सिक्खों को एक जागीर देने का फ़ैसला किया ताकि सिक्ख जागीर पाकर खुश हो जायें और अपना संघर्ष समाप्त कर दें।

ज़करिया ख़ान ने अपने विश्वस्त भाई सुबेग सिंघ को अपना 'वकील' बनाया और एक लाख की जागीर की सनद, नवाब का ख़िताब और 'खिल्लत' उनके हाथ सिक्खों को भेजी। श्री अमृतसर साहिब में भाई साहिब की भेंट जत्थेदार दरबारा सिंघ से हुई। यह जागीर सिक्ख लेना नहीं चाहते थे परंतु इससे भाई सुबेग सिंघ की अवज्ञा एवं अपमान होता।

अंततः जत्थेदार दरबारा सिंघ की आज्ञा और सिक्खों के गुरमते के कारण यह जागीर कपूर सिंघ फैज़लपुरिआ को मिली जो बाद में नवाब कपूर सिंघ के नाम से प्रसिद्ध हुए।

इस प्रकार भाई सुबेग सिंघ ने अपनी 'वकालत' पूरी की और सिक्ख इतिहास में 'वकील' कहलाए।

लाहौर के कोतवाल के पद पर : भाई सुबेग सिंघ अपनी प्रतिभा और दियानतदारी के कारण लाहौर के कोतवाल भी नियुक्त हुए। इंसाफ-पसंद होने की वजह से शहर के हिंदू-मुसलमान सब भाई साहिब से बहुत खुश थे परंतु ईर्ष्यालु लोग मौके की ताड़ में रहते थे। भाई साहिब न सिर्फ निष्पक्ष

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, फोन : ९४१७२-७६२७१*

रहकर कार्य करते रहे, बल्कि सिक्ख धर्म के लिए भी विशेष कार्य करते रहे। अपने कार्यकाल के दौरान भाई साहिब ने लाहौर में शहीदगंज सहित कई गुरुद्वारों का निर्माण कराया।

काज़ी से विवाद : भाई सुबेग सिंघ के पुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ लाहौर में एक काज़ी के पास फारसी पढ़ते थे। एक बार उनके एक सहपाठी ने सिक्ख धर्म पर कई आक्षेप लगाए। भाई शाहबाज़ सिंघ ने उस मुस्लिम सहपाठी को यथा-योग्य उत्तर देते हुए तर्क के आधार पर उसकी पूर्वाग्रहग्रस्त विचारधारा का खंडन किया। बात जब काज़ी तक पहुंची तो उसने भी मात्र १८ वर्षीय बालक भाई शाहबाज़ सिंघ को ही दोषी ठहराया। ईर्ष्यालुओं ने मौका पाकर झगड़ा खड़ा कर दिया कि भाई शाहबाज़ सिंघ ने इस्लाम का अपमान किया है।

यह घटना सन् १७४५ ई की है। ज़करिया ख़ान मर चुका था। याहिया ख़ान ने पिता की जगह लाहौर की सूबेदारी संभालते ही सिक्खों का दमन करना शुरू कर दिया था। याहिया ख़ान को जब घटना की शिकायत की गई तो उसने भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज़ सिंघ को गिरफ्तार करके अपने सामने पेश करने का हुक्म दे दिया।

चरखड़ी पर चढ़ाने का फतवा : भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज़ सिंघ को गिरफ्तार करके सूबेदार याहिया ख़ान के सामने पेश किया गया। फतवा दिया गया कि इस्लाम कबूल करो नहीं तो 'चरखड़ी' पर चढ़ाकर शहीद कर दिए जाओगे।

दोनों ने इस्लाम कबूल करने के बजाए अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षा हेतु चरखड़ी पर चढ़ना स्वीकार किया।

पिता-पुत्र ने कहा कि अगर मरने के डर से धर्म परिवर्तन करना है, तो क्या इस्लाम में आने पर मौत नहीं आएगी ?

मरनो डर हम दीन मो करो,
होइ दीन मैं फिर नहिं मरो।

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज़ सिंघ को चरखड़ी पर चढ़ा दिया गया। दोनों यातनाएं झेलते हुए वाहिगुरु-वाहिगुरु का सिमरन करते रहे। अंतत: दोनों मूर्छित हो गए।

मूर्छित पिता-पुत्र को चरखड़ी से उतार कर पुन: होश में लाया गया। दोनों को तरह-तरह के प्रलोभन दिए गए। १८ वर्षीय भाई शाहबाज़ सिंघ को जागीर और जीवन की रंगीनियों का लालच दिया गया। भाई सुबेग सिंघ को पुत्र को बचाने का लालच दिया गया परंतु पिता-पुत्र अडिग रहे। उन्होंने कहा, "हमारे गुरु ने हमारे लिए सरवंश वार दिया था। हम अपने को बचाकर क्या बढ़ाई हासिल करेंगे ?"

सिक्खन काज सु गुरू हमारे,
सीस दीओ निज सन परवारै।
हम कारन गुर कुलहि गवाई,
हम कुल राखैं कौण बडाई ॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

अंतत: याहिया ख़ान ने खीझकर पिता-पुत्र को फिर से चरखड़ियों पर चढ़ा दिया और चरखड़ियां तब तक चलाई गईं जब तक पिता-पुत्र शहीद न हो गए।

यह घटना २५ मार्च, १७४६ ई को घटित हुई। इस प्रकार समस्त प्रलोभनों और सुविधाओं को ठोकर मारकर अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षा के लिए पिता-पुत्र-- भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज़ सिंघ ने शहादत को गले लगाया :

धन घड़ी धन चरखड़ी धन निआओ तुमारा।
धरम हेत हम चड़हि चरखड़ी धन वजूद हमारा।
हम तो गुर के सिख सदावैं।
गुर के हेत प्राण भल जावैं।



स. बघेल सिंह करोड़ासिंघीया

*-डॉ. चमकौर सिंह**

सरदार बघेल सिंह करोड़ासिंघीया मिसल के शक्तिशाली, फुर्तीले एवं सिरमौर सरदार हुए हैं, जिन्होंने सिक्खों की राजसी ताकत को गंग-दुआब (यू. पी.) तक बढ़ाया तथा दिल्ली के तख़्त को हिलाकर रख दिया। ज़िला श्री अमृतसर के गांव झबाल के ये शूरवीर सरदार करोड़ा सिंघ के बाद १७६१ ई. में मिसल करोड़ासिंघीया के जत्थेदार बने। इस मिसल को 'मिसल पैजगढ़िया' भी कहा जाता था, क्योंकि सरदार करोड़ा सिंघ ज़िला गुरदासपुर के गांव पैजगढ़ के रहने वाले थे। जब दल खालसा के दो जत्थे-- बुड्ढा दल एवं तरुणा दल बने तो यह मिसल बुड्ढा दल में शामिल हुई।

अब्दाली की मराठों के विरुद्ध जंग में व्यस्त हो जाने के बाद सिक्ख सरदारों ने अलग-अलग इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया। होशियारपुर ज़िले का बड़ा हिस्सा अथवा जलंधर-दुआब का एक-चौथाई हिस्सा स. बघेल सिंघ के अधिकार में आ गया। होशियारपुर से १२ किलोमीटर पश्चिम की तरफ हरियाणा को उन्होंने अपना सदर मुकाम (मुख्यालय) बना लिया। जनवरी, १७६४ ई. में जैन खां को मारकर सिक्खों ने जब सरहिंद का राज्य बांटा तो स. बघेल सिंघ ने छलौदी (करनाल से ३० किलोमीटर उत्तर की तरफ), जमीतगढ़, खुरदीन तथा किनौड़ी पर कब्ज़ा करके करोड़ासिंघीया मिसल के प्रभाव-क्षेत्र में काफी बढ़ोतरी की तथा छलौदी को अपनी राजधानी बना लिया।

यह वो समय था जब सिक्खों का दबदबा दूर-दूर तक चलता था। मुगल साम्राज्य जरज़रा हो चुका था। सिरदार कपूर सिंघ के अनुसार, राजपूत, जाट, रुहेले तथा अवध का नवाब खालसे के दलों का नाम सुनकर कांपते थे मरहट्टे (मराठे) भी सिक्खों की सरदारी मानने के लिए तैयार थे ताकि सिक्ख उनकी अंग्रेजों के खिलाफ सहायता करें। अंग्रेज उस समय अभी नए-नए ही देश के राजनीतिक मैदान में उतरे थे। स. बघेल सिंघ ने इस सारे हालात को भांप लिया था। मुगल हकूमत की खसता हालत से भी वे भली-भांति वाकिफ़ थे। इतिहासकार डॉ. हरी राम गुप्ता के अनुसार उनका निशाना मुगल बादशाह शाहआलम (दूसरा) के नाम तले मुगल सलतनत पर सिक्ख राज्य को स्थापित करना था। बादशाह उनको सलतनत का शासनपाल (**Regent**) नियुक्त करने के मूढ़ में था। उसने यह मौका संभाला होता तो गंग-दुआब की तरह दक्षिण में मुगल सराय, बुंदेलखंड, राजस्थान तथा सिंध तक सिक्ख राज्य होना था। वे सारे उत्तरी भारत में सिक्खों की राजसी ताकत को स्थापित करने की सामर्थ्य एवं योग्यता रखते थे। सिक्ख सरदारों की आपसी रंजिश ने उनकी इस उत्साही योजना को सिरे न चढ़ने दिया। फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं कि अटक दरिया से लेकर रुहेलखंड (यू. पी.) तक सिक्खों की प्रभावशाली राजसी ताकत बन चुकी थी।

HIG-725, Phase-I, Urban Estate, Patiala- 147002

यमुना के पार सिक्खों ने पहला हमला बाबा बंदा सिंघ बहादर के समय १७१० ई. में किया था। दूसरा हमला सरहिंद पर कब्ज़ा करने के पश्चात स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया तथा स. बघेल सिंघ की अगुआई में फरवरी, १७६४ ई. में किया। इसके बाद यमुना पार सिक्खों के हमले आम हो गए। १७६५ ई. में जब बुड्ढा दल ने नजीबुदौला के विरुद्ध राजा जवाहर मल्ल की मदद की तो स. बघेल सिंघ भी खालसा फौज में शामिल थे। अब्दाली के आठवें हमले के समय भी उन्होंने बड़ी बहादुरी दिखायी। खासकर बटाला की लड़ाई में स. बघेल सिंघ ने अब्दाली के डेरे में खूब भगदड़ मचाई। मई, १७६७ ई. में सिक्खों ने फिर यमुना के पार हमला किया। अब्दाली उस समय पंजाब में ही था। उसने अपने जरनैल जहान खां को नजीबुदौला की मदद हेतु भेजा। शामली एवं कोराना के मध्य नजीबुदौला तथा जहान खां ने सिक्खों पर हमला किया। बड़ी सख़्त लड़ाई हुई, जिसमें स. बघेल सिंघ जख़्मी हो गये।

१७७३ ई. में जलालाबाद के हाकिम ने जब्रदस्ती एक ब्राह्मण परिवार की लड़की को उठा लिया। जब सिक्ख दलों ने स. करम सिंघ शहीद के नेतृत्व में उसको सोधा तो स. बघेल सिंघ भी साथ थे। १७७५ ई. में सिक्ख दल करनाल के पास इकट्ठा हुए, जहां उन्होंने स. राए सिंघ, स. तारा सिंघ घेबा (कंग) तथा स. बघेल सिंघ की अगुआई में अपने आप को तीन हिस्सों में बांट लिया। २२ अप्रैल, १७७५ ई. को इन तीनों जत्थों ने कुंजपुरे के पास, बेगी घाट के रास्ते यमुना पार हमला बोल दिया। लखनौती, गंगोह, अंबेहटा, ननौता, देवबंध आसानी से ही उनके हाथों में आ गए। वहां से वे रुहेलखंड की राजधानी गौसगढ़ पर जा हमलावर हुए। यहां के हाकिम ज़ाबता खां ने पचास हज़ार का नज़राना देकर सिक्खों के साथ संधि कर ली। यहां से सिक्खों ने ज़ाबता खां को साथ लेकर दिल्ली के पहाड़गंज तथा जय सिंह पुरा इलाके के ज़ालिमों को सोधा तथा वापिस पंजाब आ गए।

१७७६ ई. में ज़ाबता खां द्वारा मदद हेतु विनती करने पर स. बघेल सिंघ तथा अन्य सरदारों की अगुआई में सिक्ख दलों ने सहारनपुर के फौजदार अबुल कासिम, जो कि मुगल बादशाह के वज़ीर अब्दुल अहद का भाई था, पर धावा बोल दिया। ११ मार्च, १७७६ ई. को मुज्जफरनगर के पास अमीरनगर के स्थान पर लड़ाई हुई। अबुल कासिम मारा गया तथा शाही फौज भाग गयी।

१७७९ ई. में राजा अमर सिंघ पटियाला ने स. बघेल सिंघ के कुछ गांवों, जैसे लालड़ू, भुंजनी, मुल्लांपुर आदि पर कब्ज़ा कर लिया। स. बघेल सिंघ ने दूसरे सरदारों को साथ लेकर पटियाला पर चढ़ाई कर दी। घुड़ाम के पास राजा अमर सिंघ की फौज से लड़ाई हो गयी। राजा अमर सिंघ ने हालात देखकर अपने वकील चैन सिंघ के जरिए संधि कर ली तथा अपने सुपुत्र साहिब सिंघ को स. बघेल सिंघ से अमृत छकाया।

जनवरी, १७८३ ई. में बुड्ढा दल ने गंगा नदी के किनारे अनूप शहर पर धावा बोला। अवध का नवाब खतरा समझकर अंग्रेज फौज की मदद से गंगा नदी के दूसरे किनारे पर जा खड़ा हुआ। सिक्ख अलीगढ़, बुलंद शहर, फरुखाबाद के इलाके से दिल्ली की तरफ चल पड़े। स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया तथा स. बघेल सिंघ की जत्थेदारी में ६०,००० की संख्या में बुड्ढा दल ८ मार्च, १७८३ ई. को दिल्ली पहुंचा तथा

मलकागंज, सब्ज़ी मंडी, मुगलपुरा पर कब्ज़ा कर लिया। शाही फौज हार गयी तथा मुगल बादशाह शाहआलम (दूसरा) ने सिक्खों से समझौता कर लिया। समझौते की मुख्य शर्तें निम्नांकित थीं :-

१. दल खालसा को तीन लाख रुपये नज़राने के रूप में दिए जाएंगे।

२. शहर की कोतवाली चुंगी का ३७.५ प्रतिशत हिस्सा (रुपए में से छः आने) वसूल करने का अधिकार सिक्खों को होगा।

३. स. बघेल सिंघ गुरुद्वारा साहिबान के निर्माण तक ४,००० सिक्खों के जत्थे सहित दिल्ली में रहेगा।

४. दिल्ली में कानून एवं व्यवस्था कायम रखने के जिम्मेदारी स. बघेल सिंघ की होगी ।

गुरुधामों के निर्माण के लिए स. बघेल सिंघ चार हज़ार सिंघों सहित दिल्ली रहे तथा अन्य सिंघ वापिस आ गए। स. बघेल सिंघ ने सब्ज़ी मंडी, तीस हज़ारी इलाके को छावनी बना लिया। जांच-पड़ताल द्वारा निशानदेही करके उन्होंने सीसगंज, रकाबगंज, बंगला साहिब, मजनूं टिल्ला आदि गुरुद्वारों का निर्माण करवाया। सारे गुरुद्वारों के निर्माण को आठ महीने का समय लगा तथा दिसंबर, १७८३ ई. के शुरू में स. बघेल सिंघ ने दिल्ली छोड़ दी।

मुगल बादशाह शाहआलम (दूसरा) के पास जब कोई ताकतवर जरनैल न रहा तो उसने दिसंबर, १७८४ ई. को दिल्ली सलतनत की समस्त जिम्मेदारी महादजी सिंधिया को सौंपकर अपना शासनपाल नियुक्त कर लिया। सिंधिया गंग-दुआब तथा दिल्ली के क्षेत्र पर सिक्खों की मुहिमों को रोकना चाहता था। इस मंतव्य के लिए उसने समझौता करने का प्रयास भी किया।

जनवरी, १७८५ ई. में स. बघेल सिंघ ने गंगा के पार चंदौसी पर हमला किया। देश से लूटा हुआ लाखों रुपए का माल उसके हाथ लगा। यहां से वह गौसगढ़ की तरफ चल पड़ा। फरवरी, १७८५ ई. तक दिल्ली पर अंबाजी मरहट्टे ने कब्ज़ा कर लिया। स. बघेल सिंघ के साथ उसने दोस्ती का अहदनामा कर लिया। इस अहदनामे की मुख्य बात यह भी कि दिल्ली हकूमत सिक्खों को दस लाख वार्षिक नज़राना दिया करेगी।

१७९८ ई. में जार्ज थामस ने जींद पर हमला किया तो स. बघेल सिंघ ने राजा जींद की मदद की। वे पंजाब के इलाकों के बारे में हुए झगड़ों में भी हिस्सा लेते रहे। १८०२ ई. में स. बघेल सिंघ अकाल चलाना कर गये।

सहायक पुस्तकें :

*१. **Dr. Hari Ram Gupta, History of the Sikhs, Vol. IV, 1995, Munshiram Manoharlal Publishers Ltd., 54, Rani Jhansi Road, New Delhi-55.***

२. स. सोहन सिंघ सीतल, सिक्ख मिसलां ते सरदार घराणे, पांचवीं बार, १९९३, लाहौर बुक शॉप, लुधियाना।

३. सिरदार कपूर सिंघ, बहु विसतार, दूसरी बार, १९७०, लाहौर बुक शॉप, लुधियाना।



अकाली फूला सिंघ जी शहीद

-स. गुरदीप सिंघ*

अकाली फूला सिंघ जी महाराजा रणजीत सिंघ के सिरमौर जरनैलों में से थे। आपने सिक्ख राज्य की प्रफुल्लता के लिए तन, मन, धन एवं निष्काम भावना से सेवा की। आपने पंथक प्यार के अधीन सिक्ख राज्य की रक्षा के लिए अपना आप कुर्बान कर दिया।

अकाली फूला सिंघ जी का जन्म बांगर इलाके के गांव सीहां में सन् १७६१ ई में हुआ। आपके पिता भाई ईशर सिंघ मिसल निशानां वाली से संबंध रखते थे। वे अहमदशाह अब्दाली के छठे आक्रमण के समय शहीद हो गए थे। शहीद होने से पहले उन्होंने मिसल शहीदां के जरनैल बाबा नरैण सिंघ को अकाली फूला सिंघ जी की बांह पकड़ा दी थी। १० वर्ष की आयु में अकाली फूला सिंघ ने नित्तनेम की बाणी के अलावा और भी काफी बाणी कंठस्थ कर ली थी। बाबा नरैण सिंघ की शहीदी के बाद आप मिसल शहीदां के जत्थेदार बन गए जो निडर, जांबाज़ और पंथ की चढ़दी कला के लिए हर समय मर मिटने के लिए तैयार रहने वाला निहंग सिंघों का जत्था था।

अकाली फूला सिंघ ने अपना समूचा जीवन गुरमति-प्रचार, अमृत-संचार, गुरुद्वारों के प्रबंध-सुधार और खालसा पंथ की सेवा में व्यतीत किया। आप ज़िंदगी भर चढ़दी कला में रहे। आप अनेक मुश्किलों और मुसीबतों का सामना करते हुए तनिक भी विचलित न हुए। महाराजा रणजीत सिंघ के संपर्क में आने पर आपने कसूर, कश्मीर, मुलतान, पेशावर आदि के युद्ध में पूरे जोश के साथ योगदान दिया। मुलतान की घमासान लड़ाई में बरसती हुई गोलियों और तोपों के बीच में से निकलकर नवाब मुजफ्फर ख़ान पर टूट पड़ना, नि:संदेह उनकी वीरता की मिसाल है। आप में निर्भयता कूट-कूटकर भरी हुई थी। १८०६ ई में जब लाहौर दरबार में मोरां नाम के सिक्के ढलकर श्री अकाल तख़्त साहिब पर प्रवानगी के लिए आए तो आपने यह कहकर स्वीकार न किए कि गुरु साहिबान या फिर गुरसिक्खों के नाम के अतिरिक्त किसी अन्य नाम का सिक्का स्वीकार नहीं किया जा सकता।

जब शहज़ादा प्रताप सिंघ जींद ने अंग्रेजों के विरुद्ध होकर श्री अनंदपुर साहिब में शरण ली तो डोगरों के बहकावे में महाराजा ने दीवान मोतीराम को श्री अनंदपुर साहिब पर धावा बोलने और अकाली फूला सिंघ को पकड़कर लाने का हुक्म दिया। सिक्ख कौम ने अकाली फूला सिंघ जी के आगे बिना लड़ाई किए हथियार डाल दिए। इसी प्रकार नाभा के महाराजा जसवंत सिंघ की फौज अकाली फूला सिंघ जी को पकड़ने के लिए श्री अनंदपुर साहिब पहुंची तो उस फौज ने भी अकाली जी को घेरे में लेने से मना कर दिया। यह सब अकाली फूला सिंघ जी के गुरसिक्खी जीवन और उनके तेज प्रताप का परिणाम था। पंथक प्यार आपकी रग-रग में भरा हुआ था। कौम की चढ़दी कला

*३०२, किदवाई नगर, लुधियाना-१४१००८; फोन : ९८८८१२६६९०

के लिए आपने अनेक यातनाएं और कष्ट भी सहन किए।

सन् १८१८ ई में महाराजा रणजीत सिंघ ने पेशावर पर विजय प्राप्त कर यार मोहम्मद ख़ान को अपने अधीन वहां का हाकिम बनाया था। मोहम्मद ख़ान का भाई अजीम ख़ान, जो काबुल का वज़ीर था, उसे यह बात अच्छी न लगी। उसने बहुत बड़ी सेना लेकर पेशावर (पिशौर) पर आक्रमण कर दिया और बिना किसी प्रकार के युद्ध के पेशावर पर कब्ज़ा कर लिया। जब महाराजा रणजीत सिंघ को इस बात का पता चला तो उन्होंने भी युद्ध का नगाड़ा बजा दिया। अजीम ख़ान ने अपने भतीजे मुहम्मद जमान को जहांगीरे का किला जीतने के लिए भेजा। महाराजा की सेना के साथ अकाली फूला सिंघ जी, स. देसा सिंघ मजीठिया और स. फ़तहि सिंघ आहलूवालिया जैसे महान योद्धा थे। महाराजा फौज सहित अटक के किनारे पहुंच गए। जहांगीरे के पास खूनी युद्ध हुआ। सिक्खों ने जीत प्राप्त की। पठानों के छक्के छूट गए और उन्होंने नौशहिरा की तरफ कूच कर दिया।

महाराजा ने पठानों पर हमला करने के लिए पूरी योजनाबंदी की। फौज के चार हिस्से किए। एक हिस्से की कमान अकाली फूला सिंघ को दी गई। दूसरे हिस्से की कमान स. देसा सिंघ मजीठिया और स. फ़तहि सिंघ को दी गई। तीसरी कमान में शहजादा खड़क सिंघ, स. हरी सिंघ नलूआ, जनरल वेंतुरा थे, जिन्होंने अजीम ख़ान को लंडा दरिया पार करके पठानी लश्कर के साथ मिलने से रोकना था। चौथा हिस्सा महाराजा ने आरक्षित रखा, जिसने जहां पर भी ज़रूरत हो सहायता देनी थी। १४ मार्च, १८२३ ई को अमृत वेला में दीवान सजाए गए और समूह खालसाई फौजों ने अपने जत्थेदारों सहित हाज़री भरी। आने वाली नौशहिरे की लड़ाई के बारे में सिंघ जरनैलों और महाराजा ने विचार-विमर्श किया। विचार-विमर्श के उपरांत फैसला करके तुरंत हमला करने के लिए प्रस्ताव पारित कर, अरदासा सोधकर नगाड़ा बजा दिया गया। 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जैकारे लगाता हुआ खालसाई फौज का एक-एक दस्ता महाराजा रणजीत सिंघ के आगे से निकलता और महाराजा स्वयं अपने शूरवीरों को रण-भूमि में जाने के लिए विदा करते। तभी जासूसी करते हुए जासूस ने आकर बताया कि काबुल की तरफ से दुश्मन की मदद के लिए दस हज़ार फौज, ४० बड़ी तोपें और आ गई हैं। सारे हालात का जायज़ा लेते हुए महाराजा इस नतीजे पर पहुंचे कि धावा बोलने का कार्यक्रम दूसरे दिन के लिए रख दिया जाए, क्योंकि मुकाबला बड़ा ज़बरदस्त था और शाम तक खालसाई तोपखाने के पहुंच जाने की भी पूरी आशा थी।

अकाली फूला सिंघ जी को जब यह ख़बर मिली कि महाराजा सुबह के किए गए फैसले में कुछ बदलाव कर रहे हैं तो अकाली फूला सिंघ महाराजा के पास आए और वीर रस में आकर कहने लगे कि "मान लिया दुश्मन बहुत ताकतवर है, पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब की हजूरी में अरदासा सोधकर उसके विपरीत चलना खालसे का नियम नहीं है। भले ही शीश चला जाए, परंतु सतिगुरु की हजूरी में किए फैसले की लाज हर कीमत पर रखी जानी चाहिए।" महाराजा रणजीत सिंघ ने कहा कि "अकाली जी! रणनीति के अनुसार चलने में कोई नुकसान नहीं है। यदि यह हमला एक दिन बाद भी कर दिया जाए तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा।" अकाली फूला सिंघ जी ने पूर्ण विश्वास से कहा, "हमने

आज ही युद्ध करने की अरदास की है। चाहे दुश्मन की फौज इससे भी दस गुना ज्यादा हो जाए और हमें युद्ध में शहीद हो जाना पड़े, हम आज ही हमला करेंगे। अपने वचन को पूरा करने में हमारी सहायता के लिए गुरु कलगीधर पातशाह जी हमारे अंग-संग हैं।"

अकाली फूला सिंघ जी परमात्मा का ध्यान धरकर अरदास करने लगे कि "हे सतिगुरु जी! हमें ताकत बख़्शो ताकि हम अपना शीश देकर धर्म के इस राज्य (सिक्ख राज्य) को, देश की इज़्जत, मान-मर्यादा, गैरत, आन-शान को बचा सकें।" वीर-रस से परिपूर्ण इस अरदास ने खालसा फौज के मन में जादू भरा असर किया। 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जयकारों से आकाश गुंजायमान हो उठा। खालसा फौज ने निडर आगे बढ़ना शुरू कर दिया। गाजियों की तरफ से गोलियों की बौछार लगातार होती रही।

महाराजा रणजीत सिंघ फौज लेकर सिक्ख शूरवीरों की मदद के लिए आगे बढ़े और उन्होंने गाजियों की फौज पर धावा बोल दिया जो खालसा सेना को अपने घेरे में लेने के लिए प्रयत्न कर रही थी। गाजियों की तरफ से भी अंधाधुंध गोलियां बरसाई जा रही थीं। अचानक एक गोली अकाली फूला सिंघ के घोड़े के पेट में लगी और घोड़ा नीचे गिर गया। अकाली जी बड़ी फुर्ती से हाथी पर सवार हो गए। अकाली जी ने फौज को हाथों हाथ लड़ाई करने का हुक्म दिया। पूरा जत्था घोड़ों को छोड़कर तेगों सहित वैरी पर टूट पड़ा। सिंघों ने अपनी तूफानी तेगें इस प्रकार चलाईं कि गाजियों के होश उड़ने लगे। खालसाई तोपखाना भी मैदान में पहुंच गया। पठानों ने अपने पैर जमाए रखने के लिए पूरा दम लगा दिया परंतु सिंघों की काल रूपी तेग के आगे वे ज्यादा देर तक टिक नहीं पाए। इसी बीच शहज़ादा खड़क सिंघ का जत्था मदद के लिए पहुंच गया। सारा दिन भयंकर मार-काट चलती रही। शाम तक गाजियों के हौसले पस्त हो गए और वे भाग खड़े हुए। सिंघों की फौज शानदार जीत हासिल कर रही थी। सिंघों ने अच्छी तरह गाजियों का पीछा किया ताकि वे दोबारा इधर मुंह न कर सकें। इसी बीच एक पठान ने, जो कि एक पत्थर की ओट में था, पीछे से अकाली फूला सिंघ को अपनी गोली का निशाना बना लिया। इस प्रकार नौशहिरे के युद्ध में वीरता से जूझते हुए अकाली फूला सिंघ जी शहीदी प्राप्त कर गए।

धर्म और न्याय से परिपूर्ण खालसा राज्य कायम रखने की पूरी तन्मयता रखने वाले, सतिगुरु जी की हजूरी में किए गए प्रण को शीश देकर पूरा करने वाले अमर शहीद अकाली फूला सिंघ जी का महान जीवन कौम के नौजवानों में सदा ही धर्म, वीरता और कुर्बानी के जज़्बे का संचार करता रहेगा। 



सिक्ख धर्म-स्थान : धर्मसाल से गुरुद्वारा साहिब

*-डॉ. बलवंत सिंघ**

सिक्ख धर्म के प्रचार, प्रसार तथा संगठन में जिन संस्थाओं ने अहम भूमिका निभाई है, उनमें गुरुद्वारा साहिब संस्था का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में सिक्ख धर्म के बुनियादी सिद्धांतों को व्यवहारिक रूप में प्रकट करने तथा सिक्ख सभ्याचार को सृजित करने एवं इसको विश्व स्तर पर फैलाने में इस संस्था ने जो भूमिका निभाई है, वह बहुत ही विस्तृत अध्ययन का विषय है। इस वक्त हम इस संस्था की उत्पत्ति तथा कार्य-शैली को संक्षेप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न करेंगे।

'गुरुद्वारा' के शाब्दिक अर्थ हैं-- 'गुरु का घर।' पहले समय में सिक्खों के धर्म-स्थान गुरुद्वारा साहिब को धर्मसाल (धर्मशाला) के नाम से जाना जाता था। इस संस्था की उत्पत्ति के बारे में सिक्ख इतिहास में बाकायदा समकालीन हवाले प्राप्त हैं। इसकी स्थापना का इतिहास सिक्ख धर्म के प्रवर्त्तक श्री गुरु नानक देव जी से जुड़ा हुआ है। जन्म-साखी साहित्य में ऐसे अनेक हवाले प्राप्त हैं कि श्री गुरु नानक देव जी की शिक्षाओं से जो लोग प्रभावित हुए उनको गुरु साहिब ने संगत में संगठित कर अपना धर्म-स्थान अर्थात् धर्मसाल स्थापित करने की प्रेरणा दी। देश-प्रदेश की यात्राएं करने के उपरांत गुरु साहिब ने दरिया रावी के किनारे करतारपुर में जो धार्मिक केंद्र कायम किया, वह धर्मसाल के नाम से जाना जाता था। गुरु साहिब ने यह संस्था सरकार या राज्य से सहायता प्राप्त करके स्थापित नहीं की थी, बल्कि दैवी आदेश के अनुसार अपने पैरोकारों के सहयोग से स्थापित की थी। धर्मसाल कोई साधारण किस्म की संस्था नहीं बल्कि दैवी मिशन की पूर्ति हेतु दैवी हुक्म के अनुसार स्थापित की हुई दैवी संस्था थी। यह एक ऐसी संस्था थी, जहां गुरु साहिब के पैरोकार संगतीय रूप में इकट्ठा होते थे, इकट्ठा होकर प्रभु की इबादत करते थे तथा सांझे रूप में एक ही लंगर में से भोजन छकते थे। एक तरह से सिक्ख धर्म के बुनियादी सिद्धांतों को सिखाने तथा अमल में लाने के लिए इस संस्था की स्थापना की गई थी। १६वीं सदी के अंत में हमें ऐसे तथ्य प्राप्त होते हैं जिनसे सिद्ध होता है कि लंगर की संस्था भी धर्मसाल का अभिन्न अंग बन गई थी। श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी प्रचार-यात्राओं के दौरान अपने अनुयाइयों को धर्मसाल स्थापित करने के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार अलग-अलग प्रदेशों में धर्मसालाएं अस्तित्व में आ गई थीं, जहां सिक्ख इबादत के लिए संगतीय रूप में इकट्ठा होते थे। भाई गुरदास जी इस सम्बंधी ज़िक्र करते हैं कि श्री गुरु नानक देव जी के आगमन से धार्मिक रूप से ऐसी क्रांति आई कि लोग फोकट के रीति-रिवाज़ों तथा अंधविश्वासों का त्यागकर कीर्तन द्वारा ईश्वरीय-गान करने लग गए थे। वे फरमान करते हैं :

जिथे बाबा पैरु धरि पूजा आसणु थापणि सोआ। . .
घरि घरि अंदरि धरमसाल होवै कीरतनु सदा

**ए-१, श्री गुरु ग्रंथ साहिब अध्ययन केंद्र, गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी, श्री अमृतसर-१४३००१; फोन : ९८५५०५७६२४*

विसोआ। *(वार १:२७)*

इस प्रकार जहां भी गुरु साहिब ने सिक्खों को संगत रूप में संगठित किया, वहां सिक्खों के धर्म-स्थान अर्थात् धर्मसालाएं कायम हो गईं। जिन स्थानों को गुरु साहिब का चरण-स्पर्श प्राप्त था वो स्थान बाद में सिक्खों ने प्रकट कर धर्म-स्थानों के रूप में विकसित किए। ऐसे स्थानों को हम साधारण रूप से ऐतिहासिक गुरु-स्थान के रूप में जानते हैं। गुरु साहिब के अतिरिक्त उनके सिक्खों ने भी धर्मसालाएं स्थापित करने का प्रयास किया। इनमें भाई मनसुख जी, भाई लालो जी, भाई सज्जण जी आदि की उदाहरणें हमारे समक्ष हैं। जब तीसरी पातशाही श्री गुरु अमरदास जी ने मंजी-प्रथा कायम की तो मंजीदारों ने अपने-अपने इलाकों में धर्मसालाओं का निर्माण किया। श्री गुरु रामदास जी ने मंजी-प्रथा की जगह मसंद-प्रथा कायम की। गुरु साहिब के नुमाइंदे के रूप में इन मसंद सिक्खों ने धर्मसालाओं की स्थाप्ति के कार्य को और आगे बढ़ाया। मौलिक सिक्ख इतिहास से साफ ज़ाहिर है कि सिक्ख गुरु साहिबान ने खडूर साहिब, गोइंदवाल साहिब तथा रामदासपुर (श्री अमृतसर) में सिक्ख धार्मिक-केंद्र कायम किए, जिनकी कार्य-शैली दूर-दराज़ में कायम हुई धर्मसालाओं के लिए एक नमूने के रूप में थी। केंद्रीय स्थान पर स्थापित धर्म-स्थानों की देख-रेख तथा प्रबंध गुरु साहिबान की निगरानी में चलता था, जबकि अलग-अलग इलाकों में स्थापित हुई धर्मसालाओं का प्रबंध वहां के नामी सिक्ख या मसंद किया करते थे। भाई गुरदास जी लिखते हैं कि ऐसी सिक्ख संगतों तथा धर्मसालाओं के मुखिया वहां के सिक्ख हुआ करते थे :

गंगा सहगलु सूरमा हरवंस तपे टहल धरमसाला।
(वार ११:२७)

प्राप्त स्रोतों के आधार पर हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि न केवल पंजाब में, बल्कि उत्तरी उप-महाद्वीप के बड़े-बड़े शहरों में सिक्खों ने अपनी धर्मसालाएं स्थापित कर ली थीं। इन स्थानों की सिक्ख संगत मसंदों के माध्यम से गुरु साहिब के साथ निरंतर संपर्क में थी।

निःसंदेह धर्मसाल एक धर्म-स्थान के रूप में अस्तित्व में आई। इसका कार्य-क्षेत्र एवं इसकी गतिविधियों का घेरा पूजा-अर्चना तक सीमित नहीं था, जिज्ञासुओं के लिए यह धार्मिक ज्ञान का केंद्र था, जहां से उनकी रूहानी तृप्ति होती थी। सिक्खों को विद्या प्रदान करने के लिए यह एक विद्यालय था, जहां विद्यार्थियों को गुरमुखी लिपि के द्वारा गुरमति साहित्य की पढ़ाई कराई जाती थी। इसी तरह कीर्तन द्वारा प्रभु-स्तुति के लिए गुरबाणी संगीत का प्रशिक्षण भी इन स्थानों पर दिया जाता था। मानसिक रूप से टूटे और शारीरिक रूप से थके-मांदे लोगों के लिए यह ऐसी आरामगाह थी जहां से वे चढ़दी कला में रहने के लिए सबक लेते थे। यहां तक कि यह एक ऐसा शफ़ाखाना था जहां रोगियों के इलाज की सुविधा भी उपलब्ध थी। संकट के समय यह एक किला थी, जहां जुल्म एवं अत्याचार से बचने के लिए पनाह ली जा सकती थी। यहां तक कि सिक्ख पंथ में सेवा के संकल्प को फलीभूत कैसे किया गया, वह धर्मसाल के जीवन तथा उससे जुड़ी सेवाओं से भली-भांति प्रकट होता है कि किस प्रकार सिक्ख स्वयं इन सेवाओं को निभाकर अपनी आत्मिक तृप्ति करते हैं। वास्तव में धर्मसाल के स्थापित होने से आत्मिक रूप से एक ऐसा माहौल सृजित किया गया, जिसके नमूने पर पूरे समाज में आत्मिक क्रांति का आधार बन गया। श्री गुरु अरजन देव जी का उपरोक्त किस्म के माहौल

को चित्रित करता हुआ यह फरमान बहुत ही भावपूर्ण है :

मै बधी सचु धरम साल है ॥
गुरसिखा लहदा भालि कै ॥
पैर धोवा पखा फेरदा तिसु निवि निवि लगा पाइ जीउ ॥१०॥
सुणि गला गुर पहि आइआ ॥
नामु दानु इसनानु दिड़ाइआ ॥
सभु मुकतु होआ सैसारड़ा नानक सची बेड़ी चाड़ि जीउ ॥११॥
सभ स्रिसटि सेवे दिनु राति जीउ ॥
दे कंनु सुणहु अरदासि जीउ ॥
ठोकि वजाइ सभ डिठीआ तुसि आपे लइअनु छडाइ जीउ ॥१२॥
हुणि हुकमु होआ मिहरवाण दा ॥
पै कोइ न किसै रञाणदा ॥
सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीउ ॥ (पन्ना ७३)

भाई गुरदास जी ने धर्मसाल के रोज़ाना के धार्मिक एवं सामाजिक जीवन सम्बंधी जो हवाले दिए हैं, वे आज के संदर्भ में बहुत उपयोगी हैं कि इन गुरु-स्थानों को रूहानियत के केंद्र के रूप में कैसे विकसित करना है। धर्मसाल के वातावरण को भाई गुरदास जी ने मान सरोवर की भांति चित्रित किया है :

धरमसाल है मानसरु हंस गुरसिख वाहु।
रतन पदारथ गुर सबदु करि कीरतनु खाहु। (वार ९:१४)

इतना ही नहीं उन्होंने तो धर्मसाल के जीवन को सचखंड के समान दर्जा दिया है :

धरमसाल करतारपुरु साधसंगति सच खंडु वसाइआ। (वार २४:१)

भाई गुरदास जी धर्मसाल को धैर्य एवं सहज को प्रकट करने वाला दैवी-स्थान कहते हैं :

-गुर पूरै परगासु करि धीरजु धरम सची धरमसाला। (वार २६:८)
-सते पुरीआ सोधीआ सहज पुरी सची धरमसाला। (वार २९:८)

सिक्ख धर्म के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि नाम, दान, स्नान एवं किरत करो, नाम जपो, वंड छको के सिद्धांत सिक्खी जीवन-जाच का उच्चतम आदर्श हैं। धर्मसाल एक ऐसी संस्था थी जो सिक्खों के सामूहिक प्रयत्न अर्थात् संगतीय जीवन में से उत्पन्न हुई थी। यह पहला सामूहिक मंसूबा था जिसे सिक्खों ने सामूहिक प्रयत्न द्वारा साकार किया। दान एवं सेवा-भाव के ऊंचे चारित्रिक जीवन-मूल्य धर्मसालाओं को स्थापित करने और इन्हें चलाने के लिए अत्यंत कारगर सिद्ध हुए। धर्मसाल की स्थापना के लिए किसी सरकारी मदद की आवश्यकता नहीं थी, मगर इसकी आर्थिक ज़रूरतें सिक्खों से आए दान के द्वारा ही पूरी होती थीं। सिक्ख धर्म का नियम है कि 'गरीब का मुंह, गुरु की गोलक।' यह भी प्रसिद्ध है कि 'दाना-पाणी गुरु का, टहिल-पाणी (सेवा) सिक्खां की।' प्रारंभिक सिक्ख साहित्य में ऐसे कई हवाले आए हैं जो सिक्खों को धर्मसाल में खाली हाथ न जाने की शिक्षा देते हैं। यदि रुपया-पैसा भेंट-स्वरूप नहीं ले जाया जा सकता तो कोई वस्तु धर्मसाल में सिक्ख भेंट-स्वरूप लाते थे। दसवंध की प्रथा ने धर्मसाल को आर्थिक रूप से एक ऐसी मज़बूत स्थिति में पहुंचा दिया था कि एक तरह से यह स्व-निर्भर संस्था थी। क्षेत्रीय सिक्ख संगत के मुखिया या मसंद धर्मसाल का प्रबंध करने में मुख्य भूमिका निभाते थे। वे अपने गुरु के प्रति धर्मसाल में भेंट-स्वरूप आए धन या वस्तु को अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए इस्तेमाल नहीं करते थे, बल्कि गुरु-दरबार में पहुंचा देते थे। इन सिक्खों को धर्मसाल में भेंट-स्वरूप आए धन-पदार्थ में

खयानत करने की मनाही थी। भाई गुरदास जी ने धर्मसाल के धन-पदार्थ के गलत इस्तेमाल से सिक्खों को मोड़ने के लिए इसके व्यक्तिगत इस्तेमाल को ज़हर खाने के समान बताया है :

जिउ मिरयादा हिंदूआ गऊ मासु अखाजु।
मुसलमाणां सूअरहु सउगंद विआजु।
सहुरा घरि जावाईऐ पाणी मदराजु।. . .
जिउ मिठै मखी तरै तिसु होइ अकाजु।
तिउ धरमसाल दी झाक है विहु खंडू पाजु ॥
(वार ३५:१२)

श्री गुरु अरजन देव जी तक सिक्ख धर्म-स्थान धर्मसाल के नाम से जाने जाते थे। जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना के बाद इन धर्मसालाओं में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश कर दिया गया तो इन धर्मसालाओं को 'गुरुद्वारा' के नाम से जाना जाने लगा। चूंकि किसी ऐतिहासिक एवं धार्मिक महत्त्व वाली इमारत में जब तक श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश नहीं किया जाता तब तक उसको गुरुद्वारा साहिब का रुतबा प्राप्त नहीं होता।

गुरुद्वारा साहिब एक ऐसी पवित्र संस्था है जिसके परिसर में निर्मित लंगर संस्था, सराय, सरोवर आदि को विशेष महत्त्व प्राप्त हो जाता है। गुरुद्वारा साहिब की इमारत अन्य धर्मों के धर्म-स्थानों के मुकाबले दिशा की बंदिशों से मुक्त है। उत्तर या पश्चिम की तरफ प्रवेश द्वार को कोई महत्ता नहीं, क्योंकि प्रभु तो प्रत्येक दिशा में मौजूद है। गुरुद्वारा साहिब के प्राय: चार दरवाज़े होते हैं। एक तो ये सिक्ख धर्म के सर्वसांझे उपदेश की याद दिलाते हैं और दूसरा तात्पर्य इसका यह है कि गुरुद्वारा साहिब सब लोगों के लिए खुला है अर्थात् यहां कोई भी बिना किसी भिन्न-भेद के प्रभु-बंदगी के लिए आ सकता है, किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता। एक बात का ध्यान ज़रूरी है कि गुरुद्वारा साहिब में प्रवेश करने के लिए जो बाहरी एवं भीतरी स्वच्छता की ज़रूरत है तथा जो अदब-सत्कार के नियम हैं, उनकी पालना करनी होती है।

सिक्ख गुरु साहिबान एवं माताओं के ऐसे कई हुक्मनामे प्राप्त हैं, जिनमें सिक्खों को गुरुद्वारा साहिब के काम की तरफ विशेष रूप से ध्यान देने की ताकीद की गई है। १७वीं एवं १८वीं सदी में गुरुद्वारा साहिब के प्रबंध के लिए गुरबाणी के विद्वान, उच्च चारित्रिक जीवन के धारक एवं सिक्ख रहित मर्यादा की पालना करने वाले को ही चुना जाता था। खालसा राज्य स्थापित हो जाने पर इन गुरुधामों के रखरखाव तथा धर्म-अर्थ सेवाओं के लिए सिक्ख हुक्मरानों ने बड़ी-बड़ी जागीरें दान में दीं। समय पाकर ये जागीरें धर्म-स्थान का प्रबंध करने वाले महंतों के लिए विरासती जायदाद में परिवर्तित हो गईं। फलस्वरूप इनका प्रबंध करने वाली सिक्खों की एक पुजारी श्रेणी अस्तित्व में आ गई। इस श्रेणी ने सिक्ख रहित मर्यादा के स्वरूप को बरकरार तो क्या रखना था बल्कि इसमें बहुत कुछ उल्टा-पुल्टा शामिल कर दिया। यहां तक कि श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर की परिक्रमा में देवी-देवताओं की मूर्तियां रख दी गईं। श्री दरबार साहिब की दर्शनी ड्योढ़ी पर हिंदू अवतारों तथा देवियों की मूर्तियां स्थापित करने की कोशिश की गई। सिंघ सभा के नेताओं, विशेषत: ज्ञानी दित्त सिंघ ने अपनी पत्रिका 'खालसा अख़बार' में इसकी सख़्त आलोचना की, तो इस पर रोक लगी। गुरुद्वारा साहिब के प्रबंध में इतनी गिरावट आई कि ये मात्र नाम के ही गुरुधाम रह गए थे। श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर में सिक्खों में से तथाकथित अछूतों द्वारा भेंट किए कड़ाह प्रसाद की अरदास भी नहीं की जाती थी।

(शेष पृष्ठ ४३ पर)

सिक्ख धर्म में नारी का रुतबा एवं योगदान

*-बीबी नवजीत कौर**

समाज-निर्माण में पुरुष एवं नारी को दो परस्पर पूरक तत्वों के रूप में माना तथा स्वीकार किया जाता है। कहा जाता है कि दोनों के बिना एक-दूसरे का अस्तित्व अधूरा है। दुखांत यह है कि यह बात कहने में ज्यादा आई है, व्यवहारिकता में कम।

आदि काल से पुरुष-प्रधान समाज में नारी अनेकों ही रूप पहनती, ओढ़ती तथा कई बार बर्दाश्त भी करती आई है। सामाजिक व्यवस्था में कभी उसको रानी कहा गया और कभी दासी। अनेक रूपों की नाव में सवार वो सदियों से अपना वजूद स्थापित करने के लिए निरंतर संघर्ष कर रही है और कभी खत्म न होने वाली लड़ाई लड़ रही है। यह बात कहने में ज्यादा आती है कि प्रत्येक पुरुष के पीछे किसी न किसी स्त्री का हाथ होता है मगर मानता कोई-कोई है। वह स्त्री-- मां, पत्नी, बहन, पुत्री किसी भी रूप में हो सकती है। इसके बावजूद भी भारत में पुरुष-प्रधान समाज के कारण नारी अपमानित की जाती रही है।

नारी का स्वरूप तथा अधिकार आदि काल में काफी अच्छा था, जो कुछ समय बाद धीरे-धीरे खत्म होता गया। समाज में उसका सम्मान एवं अधिकार उपनिषद काल, सूतर्क काल, बुद्ध एवं जैन काल में से गुज़रते हुए आठवीं शताब्दी तक काफी हद तक खत्म हो गया। उसको पुरुष समाज ने पर्दा देकर 'हरम' में स्थान दे दिया। विवाह अल्प आयु में होने के कारण तथा स्त्रियों की बेपति करने के कारण उसके अस्तित्व के बचे रहने में कमज़ोरी आने लगी।

गुरमति ने नारी को उस समय के नारी संकल्प से अलग रूप प्रदान किया है। उस समय मुस्लिम सभ्याचार प्रचलित था, जो नारी को मात्र भोग की वस्तु मानता था। पुरुष कई विवाह करवा सकता था, जबकि नारी के लिए विधवा विवाह पर भी रोक थी। धार्मिक, राजनीतिक कार्यों में हिस्सा लेने का उसको कोई हक नहीं था। पुत्र एवं पति के अतिरिक्त उसको घर के अन्य सभी पुरुषों से पर्दा करना पड़ता था। ऐसी करुणामयी स्थिति में सिक्ख धर्म में बेबे नानकी जी, माता त्रिपता जी, माता भानी जी, माता गुजरी जी, माता सुंदरी जी, माता साहिब कौर जी आदि नारियां उभरकर सामने आईं जिन्होंने न सिर्फ नारी के स्वरूप का नया पक्ष उजागर किया बल्कि आने वाले समय के लिए भी नारियों का पथ प्रदर्शित किया। योग मत तथा सूफी मत नारी को आध्यात्मिक साधना में रुकावट मानता हुआ गृहस्थ जीवन को नकारता था, जबकि गुरु साहिबान ने इस जीवन को एक-दूसरे का पूरक सिद्ध किया। नारी को घर में श्रेष्ठता प्रदान कर उसको खानदान का उद्धार करने वाली कहा :

कुलु उधारहि आपणा धंनु जणेदी माइ ॥
(पन्ना २८)

परिवार में उसके अस्तित्व से न सिर्फ परिवार बल्कि सामाजिक वातावरण भी सुखमय

**२२, बचित्तर नगर, पटियाला-१४७००१*

बना रहता है। उसकी शख़्सियत सबके लिए आदर्श होती है। पुरुष की विद्या सिर्फ उसी तक सीमित रहती है जबकि नारी की विद्या से दो परिवारों के साथ-साथ इर्द-गिर्द भी रोशन होता है। इसी लिए गुरु साहिबान ने नारी को शिक्षित बनाने के कई प्रयत्न किए।

गृहस्थ जीवन में नारी तथा पुरुष के रिश्ते को सामाजिक महत्ता देते हुए विवाह की रस्म को जरूरी बताया, क्योंकि 'हरम' तथा 'पर्दे' के कारण समाज में बिना विवाह किए स्त्रियां रखने की परंपरा काफी ज्यादा बढ़ गई थी जिसका ज़िम्मेवार हाकिम वर्ग था। गुरु साहिबान ने नारी एवं पुरुष का रिश्ता सांसारिक न बताते हुए आत्मिक तथा मानसिक सिद्ध किया जो ईश्वर द्वारा बनाया जाता है :

नानक सा धन मिलै मिलाई जिस नो आपि मिलाए ॥ (पन्ना २४३)

गृहस्थ आश्रम में दूसरे विवाह को उस रूप में ही जायज़ करार किया जब दोनों में से किसी एक की मृत्यु हो गई हो। इसका एक कारण जहां विधवा विवाह को प्रमुखता देना था वहीं सती-प्रथा की निंदा करना भी था। सती-प्रथा का चलन होने के कारण विधवा को पति के साथ ही आग में जलना पड़ता था। गुरु साहिब ने यह स्पष्ट किया कि पति के साथ जलने से कोई लाभ नहीं, इसलिए सती होना गलत है :

जलै न पाईऐ राम सनेही ॥
किरति संजोगि सती उठि होई ॥ (पन्ना १८५)

गुरु साहिबान ने परमेश्वर को पति रूप में दर्शाकर समस्तों जीवों को पत्नी का रूप बताया तथा समझाया कि जब जीव परमेश्वर के वियोग में तड़पता है, जलता है, तभी वह सती कहलवाने के लायक है। मृतक के साथ चिता में जल जाने वाले सती नहीं हैं :

सतीआ एहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंन्हि ॥
नानक सतीआ जाणीअन्हि जि बिरहे चोट मरंन्हि ॥ . . .
भी सो सतीआ जाणीअनि सील संतोखि रहंन्हि ॥
सेवनि साई आपणा नित उठि संमालंन्हि ॥
(पन्ना ७८७)

प्रभु को पति तथा जीव को पत्नी (स्त्री) रूप में चित्रत करने के साथ-साथ गुरु साहिबान ने नारी के गुणों तथा स्वभाव को अंकित करने वाले दो रूपों-- 'सुहागिन' तथा 'दोहागन' की कल्पना करके इनके कर्मों का वर्णन किया। दोहागन स्त्री वह है जो पति से बेमुख होकर अकेली है। इसी कारण वह समाज द्वारा अपमानित की जा रही है। पति के घर ही उसको मान (सम्मान) मिल सकता है। सुहागिन वह है जो गुणवंती है। जीवन-मूल्यों को ध्यान में रखते हुए केवल एक ही पति पर केंद्रित है। गुरु साहिबान ने इस संसार को मायका तथा परमात्मा के घर को ससुराल कहा है, क्योंकि जीव रूपी स्त्री को पत्नी तथा मां के हक उसी घर में ही मिलने हैं। गुरु साहिबान ने नारी के पत्नी रूप को सार्थक सिद्ध करने के साथ-साथ उसके मां के रूप को भी महत्त्व दिया। नारी जननी के नाम से भी जानी जाती है, इसलिए वह निंदनीय नहीं है। राजाओं, पीरों की जननी भी 'नारी' ही है :

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ॥
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
भंडहु ही भंडु उपजै भंडै बाझु न कोइ ॥
नानक भंडै बाहरा एको सचा सोइ ॥
(पन्ना ४७३)

समानता सिद्ध करने के लिए पर्दे को दूर किया। पर्दे की रस्म को खत्म करने के लिए नारी को संगत व पंगत में जगह दी, जो घर के फर्ज़ों की पूर्ति भी करती थी और ज़रूरत पड़ने पर मैदान-ए-जंग में दुश्मनों का नाश भी करती थी। स्पष्ट किया कि नारी न शारीरिक पक्ष से पुरुष से कमज़ोर है और न ही मानसिक पक्ष से। ज़रूरत पड़ने पर वह बुद्धि तथा चाटुकारिता से दुश्मनों से युद्ध भी कर सकती है।

इतिहास में भी इतिहासकारों ने ज्यादातर पुरुषों की शूरवीरता को ही लिखा है। जब नारी की कुर्बानियों की बात की जाती है तो 'जिन्हां सिंघां सिंघणीआं ने धरम हेत सीस दित्ते. . ." कहकर उनकी शूरवीरता को याद किया जाता है। सिक्ख इतिहास में नारियां दो रूप लेकर उभरती हैं। पहली वे जिन्होंने नारी के सम्मान तथा सामाजिक रुतबे को ऊंचा किया तथा दूसरी वे जिन्होंने शहादत तथा कुर्बानियां दीं।

नारी के गौरव तथा सामाजिक रुतबे को ऊंचा करने के लिए गुरु साहिबान ने शुरुआत घर से की। बेबे नानकी जी ने ही श्री गुरु नानक देव जी का पहला सिक्ख होने का सम्मान हासिल किया था।

गुरु साहिबान की सुपत्नियों के अलावा अनेकों ही सिंघों की पत्नियों ने न सिर्फ पारिवारिक फर्ज़ ही पूरे किए बल्कि सिक्ख इतिहास की सृजना में भी योगदान डाला। धर्म की रक्षा के लिए दृढ़ होकर शहीद होने वाले शूरवीरों को दृढ़-संकल्पी बनाने में उनकी माताओं का भी योगदान रहा।

१८वीं सदी तक सिक्ख नारी का चरित्र न केवल ममता व त्यागमयी नारी का उभरता है बल्कि अच्छी नीतिवान तथा योद्धा नारी का स्वरूप भी उनमें से स्पष्ट होता है। माई भागो ऐसी ही नारियों में से एक थीं जो बेदावा लिखकर गए चालीस सिंघों को न सिर्फ वापिस लाईं बल्कि युद्ध में उन्होंने सिक्खों की अगुआई भी की।

इसी तरह दिल्ली के दरवाजे पर दो सौ से ज्यादा सिंघनियों, जिन्होंने मीर मन्नू की अनेकों यातनाएं झेलीं, का ज़िक्र भी सिक्ख इतिहास में मिलता है। आधी-आधी रोटी तथा एक-एक घूंट पानी पीकर उन सहनशील नारियों ने न सिर्फ चक्की पीसी बल्कि अपने भूखे-प्यासे बच्चों का दुख भी झेला। अत्याचार की परवाह न करते हुए उन्होंने अपने मासूम बच्चों के शरीर के टुकड़ों के हार अपने गलों एवं झोलियों में डलवाकर, परमात्मा की रज़ा मानते हुए सब्र का घूंट भरा। उनकी इस वीरता के कारण न सिर्फ सिक्ख बल्कि दुश्मन भी उनकी प्रशंसा कर रहे थे।

सामूहिक रूप से सिक्ख धर्म ने नारी को अधोगति की हालत से उभारते हुए, उसे जागृत करते हुए इस योग्य बनाया कि वह समाज में पुरुष की समानता कर सके। स्त्री को गृहस्थ तथा आध्यात्मिक जीवन में रुकावट न मानकर पूरक सिद्ध किया। गुरु साहिबान द्वारा किए गए सुधारों एवं प्रयत्नों का सदका ही बाद में अन्य समाज-सुधारक पैदा हुए, जिनकी बदौलत नारी की रक्षा एवं अधिकारों के लिए धीरे-धीरे कानून बनने शुरू हो गए। कहा जा सकता है कि उस समय की नारी की दशा के अनुसार माता सुलक्खणी जी, बेबे नानकी जी, बीबी भानी जी, माता गुजरी जी, माता सुंदरी जी तथा अनेकों ही अन्य सिंघनियों का नारी-स्वरूप बदलने में विशेष योगदान रहा है। ❁

कविता

मां की महिमा

-डॉ दादूराम शर्मा*

मैं हूं एक, अनेक बन, करूं सृष्टि-विस्तार।
प्रभु का संकल्प यह, मां करती साकार।
जननी के ही उदर में, लेते सब आकार।
दे अस्तित्व ला जगत् में, पालें कर-कर प्यार।
राम, कृष्ण मां से हुए, ईसा, 'नानक', बुद्ध।
महावीर, मोहम्मद ने, जग को किया विशुद्ध।
मां ही जग का मूल है, मां जग का आधार।
मां से ही होता सतत्, सब जग का विस्तार।
अमृत मां के दूध में, उर में प्यार अपार।
स्वर्गिक सुख है गोद में, चरण मुक्ति के द्वार।
अमृतोपम 'मां' शब्द की, सुधा-सिक्त झंकार।
छेड़ें श्रद्धा-भक्ति-रस, मन-वीणा के तार।
मां! तेरा ॠण मनुष्य कभी, सकता नहीं उतार।
हम पर तो तूने किए, कोटि-कोटि उपकार।
सुंदर तन-मन प्राण दे, दिए दिव्य संस्कार।
रोम-रोम में रम रहा, मां का तरलित प्यार।
वात्सल्य-रस से भरा, मां तेरा शुचि नाम।
पद-पदमों में सजते, पावन चारों धाम।
वात्सल्य, करुणा, दया, क्षमा, तपस्या, त्याग।
मातृ-हृदय में दिव्य गुण, भरे सहित अनुराग।
मां बन, मां का नारियां, देतीं कर्ज़ उतार।
निंदा करके मां की, मत चढ़ाओ भार।
नर को गौरव पिता का, मां से मिला महान।
किंतु कृतघ्न इस तथ्य को, कहां रहा अब मान?
मां से चलता आ रहा, सतत् सृष्टि का चक्र।
कन्या-भ्रूण-विनाश का, उसे लीलता नक्र।
उसे लीलता नक्र यदि, होगी न कन्या।
होगी मानव जाति कहां, फिर धरती धन्या?
बिना मूल के हो सकता है, पेड़ कहां से?
हुआ अनादि-अनंत जगत का, उद्‌गम मां से।
बहुधा होते आ रहे, जग में पूत-कपूत।
किंतु कुमाता के हुए, उदाहरण न प्रभूत।
क्यों करते हो क्रूर-जन, बधुओं का संहार?
जननी बन ये करेगी, वंश-बेलि-विस्तार।
नारी शोभा सृष्टि की, सृजन-स्नेह का मूल।
खिलते इस अंक में, सुंदर-सुरभित फूल।
विधि की रचना-कुशलता, त्याग-तपस्या-सार।
माता मृदुता, क्षमा, दया, सुंदरता साकार।

(सधन्यवाद 'पंजाब सौरभ')

**प्राध्यापक, महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१; फोन : ०७६९२-२२२७९२*

सिक्ख धर्म-स्थान : धर्मसाल से गुरुद्वारा साहिब

(पृष्ठ ३९ का शेष)

ब्रिटिश सरकार भी इस पुजारी श्रेणी की पुश्त-पनाही करती थी। एक तरह से सिक्ख पंथ में प्रवेश की धार्मिक-सामाजिक कुरीतियां गुरुद्वारा साहिब का प्रबंध बिगड़ने के कारण ही आई थीं। १९वीं सदी के आखिर में सिंघ सभा लहर के प्रवर्त्तकों ने इसके विरुद्ध ऐसा संघर्ष आरंभ किया कि २०वीं सदी के आरंभ में इसने गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर का रूप धारण कर लिया। इसके परिणामस्वरूप लंबे संघर्षों एवं अनेक शहीदियों के बाद १९२५ ई में गुरुद्वारा एक्ट पारित किया गया और शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी कानूनी रूप से अस्तित्व में आई।



गुरबाणी चिंतनधारा : ८९

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

साजन संत करहु इहु कामु ॥
आन तिआगि जपहु हरि नामु ॥
सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु ॥
आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ॥
भगति भाइ तरीऐ संसारु ॥
बिनु भगती तनु होसी छारु ॥
सरब कलिआण सूख निधि नामु ॥
बूडत जात पाए बिस्रामु ॥
सगल दूख का होवत नासु ॥
नानक नामु जपहु गुनतासु ॥५॥ (पन्ना २९०)

२०वीं असटपदी की पांचवी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह ने कलयुगी जीवों को व्यर्थ के धंधों को छोड़कर सज्जन पुरुषों जैसे भले काम करने की ओर प्रेरित किया है। परमेश्वर का सिमरन करके सच्चा सुख हासिल करते हुए दूसरों को भी इस सुख के भागीदार बनाने की प्रेरणा दी है। बिना ईश्वर की बंदगी के सब कुछ व्यर्थ है तथा नश्वर है। सदैव कायम रहने वाले प्रभु-नाम से प्रीति करके जीवन सफल बनाने की प्रेरणा दी गई है।

श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि हे संत-जनो! सज्जन पुरुषों!! आप अन्य समस्त साधनों को त्यागकर केवल परमेश्वर का नाम जपो, नाम-सिमरन का अभ्यास करो। सदैव प्रभु-नाम का सिमरन करते हुए इसी से सुख हासिल करो अर्थात् हमेशा प्रभु का सिमरन करते रहने से निश्चित रूप से सुख प्राप्त होगा। प्रभु का नाम स्वयं भी जपो और दूसरों को भी जपाते रहो। (यह बात हृदय में दृढ़ कर लो कि) प्रभु-भक्ति से ही इस संसार रूपी भवसागर से पार उतरा जा सकता है। प्रभु की भक्ति के बिना यह शरीर जीवन को बिना सफल किए नश्वर हो जाएगा। परमेश्वर का नाम कल्याणकारी एवं सुखों का भंडार है। नाम जपने के फलस्वरूप विकारों में डूबतों को भी आश्रय (सहारा) मिल जाता है, समस्त दुखों का नाश हो जाता है। पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि प्रभु-नाम जपो, प्रभु-नाम ही गुणों का खज़ाना है।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह ने प्रत्येक जीव को प्रबोधित किया है कि उसे अन्य सभी साधन छोड़कर केवल हरि-नाम का ही अभ्यास करना है ताकि सदा स्थिर रहने वाला प्रभु-नाम हृदय-घर में बस जाए तथा सच्चे सुख की प्राप्ति हो। साथ में यह भी समझाया गया है कि यह सदैव कायम रहने वाला सुख, जो नाम-सिमरन की बदौलत नसीब होता है, प्राप्त करके दूसरों में भी बांटना है। गुरबाणी में इस संदर्भ में यही समझाया गया है कि यह वह खज़ाना है जिसे जितना प्रयोग में लिया जाए तथा बांटा जाए, वह उतना ही बढ़ता जाता है। गुरबाणी-प्रमाण है :

खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥
तोटि न आवै वधदो जाई ॥ (पन्ना १८६)

यहां उपरोक्त शबद में छिपा गूढ़ रहस्य यह है कि प्रभु-नाम का खज़ाना ही ऐसा

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

विलक्षण खज़ाना है जिसे जितना बांटो उतना ही बढ़ता है अन्यथा दुनिया की दौलत के भंडार खर्च करने पर हमेशा कम ही होते हैं। एक अन्य विचारणीय तथ्य यह है कि सांसारिक धन पदार्थ के खज़ाने मनुष्य द्वारा स्वयं तैयार किए जाते हैं या उसे विरासत में मिलते हैं जबकि नाम रूपी खज़ाना गुरु की रहमत से प्राप्त होता है। सच्चे गुरु द्वारा प्राप्त सच्चे एवं सदा कायम रहने वाले खज़ाने में से जब चाहो, जितना चाहो खर्चो, यह उतना ही बढ़ता जाएगा :

पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥
ता मेरै मनि भइआ निधाना ॥१॥
रतन लाल जा का कछू न मोलु ॥
भरे भंडार अखूट अतोल ॥ (पन्ना १८६)

वस्तुत: यह अनमोल एवं अद्वितीय खज़ाना है जिसे सतसंगत में मिल-बैठकर खर्च करने से कई गुना बढ़ जाता है।

गुरबाणी आशयानुसार यह मानव-जीवन दुर्लभ एवं बेशकीमती है तथा परमेश्वर में एक रूप होने का यही एक स्वर्णिम अवसर है। मनुष्य-जीवन के प्रमुख उद्देश्य को समझाते हुए बाणी में बार-बार यही निर्मल संदेश दिया गया है :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ (पन्ना १२)

अत: स्पष्ट है कि सांसारिक कार्यों में लिप्त होकर प्रभु-नाम-सिमरन के असली मनोरथ को भुलाकर तो अंत में जीव के पास पछतावा ही शेष रह जायेगा। सुखों के भंडार तथा दुखों के विनाशकर्त्ता परमेश्वर का श्वास-श्वास नाम जपकर ही इस संसार रूपी भवसागर से पार उतारा संभव है।

उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ ॥
मन तन अंतरि इही सुआउ ॥
नेत्रहु पेखि दरसु सुखु होइ ॥
मनु बिगसै साध चरन धोइ ॥
भगत जना कै मनि तनि रंगु ॥
बिरला कोऊ पावै संगु ॥
एक बसतु दीजै करि मइआ ॥
गुर प्रसादि नामु जपि लइआ ॥
ता की उपमा कही न जाइ ॥
नानक रहिआ सरब समाइ ॥६॥

२०वीं असटपदी की छठी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह अपने हृदय-घर में उठे प्रेम-रस की उमंग का ज़िक्र करते हुए साधु-जनों के चरण धोने से प्राप्त होने वाले आनंद का वर्णन करते हुए फरमान करते हैं कि गुरु-कृपा द्वारा हम सदैव प्रभु-नाम का अभ्यास करते रहें तथा नाम-अभ्यास द्वारा उसे हृदय-घर में महसूस करते रहें।

गुरु पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि जिस हृदय-घर में अर्थात् जिसके अंदर परमेश्वर की प्रीति पैदा हो गई तथा प्रभु के प्रति प्रेम और चाव उत्पन्न हो गया तो उसके मन में प्रभु-नाम की प्राप्ति की उमंग पैदा हो जाती है। ऐसे जीव की मन-तन से यही कामना है कि उसे नाम-रस की प्राप्ति सदैव होती रहे। उसे नेत्रों से साधु-जनों के दीदार करके तथा उनके चरण परसकर आनंद की अनुभूति होती है। परमेश्वर के भक्तों के मन में प्रभु-प्रेम टिका रहता है। ऐसे भक्त की संगत किसी विरले (भाग्यशाली) को ही प्राप्त होती है। गुरु साहिब परमेश्वर के चरणों में अरदास करते हुए फरमान करते हैं कि हे प्रभु! हे कृपा-निधान!! दया करके मुझे प्रभु-नाम की दात बख़्शो ताकि गुरु की बख़्शिश से आपका नाम जपता रहूं। परमेश्वर की उपमा अकथनीय

है अर्थात् बयान से परे है। वह सर्वव्यापी है।

उपरोक्त पउड़ी में गुरु की बख़्शिश से परमेश्वर के नाम की याचना की गई है। यह भी स्पष्ट किया गया है कि जिस हृदय-घर एवं शरीर में प्रभु-नाम जैसा अनमोलक पदार्थ बस जाता है, उसके मन-तन में हमेशा आनंद बना रहता है। वास्तव में नाम-अभ्यासी के हृदय-घर में प्रभु-चरणों के साथ प्रीति बन जाती है। इसकी बदौलत जो आनंद प्राप्त होता है वह सबसे श्रेष्ठ है। उसके समक्ष समस्त पदार्थ तुच्छ लगने लगते हैं।

अरदास में भी प्रत्येक सिक्ख रोज़ ही परमेश्वर के चरणों में यही प्रार्थना करता है-- "दानां सिर दान, नाम दान।" अर्थात् समस्त दानों में से श्रेष्ठ दान नाम-दान की प्राप्ति की याचना करनी चाहिए। वास्तव में गुरबाणी में नाम को अनमोल कहा गया है, जिसकी कीमत आंकी नहीं जा सकती :

नामु पदारथु अमुलु सा गुरमुखि पावै कोई ॥
(पन्ना ४२५)

वास्तव में प्रभु-नाम-सिमरन वह खुमारी है जो दिन-रात चढ़ी रहती है। नाम और नामी अभेद हो जाते हैं। प्रभु-नाम-सिमरन करने वाले के समस्त कार्य स्वत: सिद्ध होने लगते हैं। प्रभु-नाम में अभेद हुए जीव की आत्मिक उच्चावस्था को बयान करती गुरबाणी की पावन पंक्तियां हैं :

नामो ही मनि लागा मीठा ॥
जलि थलि सभ महि नामो डीठा ॥
नामे दरगह मुख उजले ॥
नामे सगले कुल उधरे ॥
नामि हमारे कारज सीध ॥
नाम संगि इहु मनूआ गीध ॥
नामे ही हम निरभउ भए ॥
नामे आवन जावन रहे ॥ (पन्ना ८६३)

प्रभु-नाम मिलता उन्हीं को है जिन पर प्रभु की कृपा-दृष्टि हो जाए :

प्रभ बखसंद दीन दइआल ॥
भगति वछल सदा किरपाल ॥
अनाथ नाथ गोबिंद गुपाल ॥
सरब घटा करत प्रतिपाल ॥
आदि पुरख कारण करतार ॥
भगत जना के प्रान अधार ॥
जो जो जपै सु होइ पुनीत ॥
भगति भाइ लावै मन हीत ॥
हम निरगुनीआर नीच अजान ॥
नानक तुमरी सरनि पुरख भगवान ॥७॥

२०वीं असटपदी की ७वीं पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह जी ने परमेश्वर के अत्यंत दयालु स्वभाव का वर्णन किया है। वह गरीब-निवाज़ है, अनाथों का नाथ है। यह भी स्पष्ट किया है कि ऐसे परम कृपालु प्रभु की जो आराधना करता है, वह पूर्णतया पवित्र हो जाता है।

श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि हे बख़्शिशों के भंडार प्रभु! हे गरीब-निवाज़ दयालु प्रभु! हे भक्तों से सदैव प्यार करने वाले मालिक पिता! हे परम कृपालु पिता! हे बेआसरों के सच्चे आसरा प्रभु! हे अनाथों के नाथ! हे गोबिंद! हे गोपाल! हे समस्त शरीरों की प्रतिपालना करने वाले प्यारे परमेश्वर! हे आदि स्वरूप (संपूर्ण रचना के मूल) प्रभु जी! हे करता पुरख परमेश्वर! हे भक्त-जनों के प्राणों के आधार! जो-जो मनुष्य भक्ति एवं श्रद्धा-भाव से आपका नाम हृदय में बसाते हैं वे पवित्र हो जाते हैं। अनुनय-विनय करते हुए कलयुगी जीवों को गुरु पंचम पातशाह यही दिशा-निर्देश दे रहे हैं कि तुम इस प्रकार परमेश्वर के चरणों में विनती करो कि हे

अकाल पुरख! हे भगवान! हम गुणों से रहित, अवगुणों से भरे हुए नीच एवं अज्ञानी हैं। हम गुणहीन, अधम जीव आपकी शरण में हैं।

परमेश्वर समस्त गुणों का भंडार है और हम अवगुणों से भरे हुए हैं। उसकी रहमतों का अंत नहीं, हमारी त्रुटियों एवं पापों का हिसाब नहीं, लेकिन फिर भी जैसे एक चिंगारी आग की बड़ी सामग्री को जलाकर भस्म कर देती है वैसे ही परमेश्वर का नाम तिनका मात्र भी जो हृदय में बसा लेता है, उस जीव के हज़ारों जन्मों के अनंत पाप, अवगुण पल भर में विनिष्ट हो जाते हैं, भस्म हो जाते हैं। उपरोक्त पउड़ी से यह तथ्य स्पष्ट है कि अपने गुनाहों को स्वीकारते हुए प्रभु की शरण में आने की आवश्यकता है। शरण आने वाले को कंठ से लगाना प्रभु का बिरद है और वह शरण आने वाले की हमेशा लाज रखता है। अहंकारवश हमें अपने अवगुण दिखाई नहीं देते। हम तो केवल दूसरों के दोष देखने में ही इतना गलतान हो चुके हैं कि हमारी दृष्टि अपने अवगुणों की ओर जाती ही नहीं। यहां विचारणीय तथ्य यह है कि अगर बीमारी समझ में न आए तो वह लाइलाज हो जाती है और भयावह रूप धारण कर मृत्यु का कारण बन जाती है। ठीक ऐसे ही ये विकार और दोष हैं। यदि हम इन्हें दूर करने का कोई यत्न नहीं करेंगे तो धीरे-धीरे ये विकार और दोष विकराल रूप लेकर हमारे आत्मिक जीवन की मृत्यु का कारण बन जाएंगे। जो समय रहते सचेत हो जाएंगे और सच्चे गुरु के समक्ष जाकर मार्गदर्शन ग्रहण कर लेंगे वे पवित्र एवं आनंदमयी जीवन व्यतीत करेंगे। पावन बाणी में फरमान है :

मेरा बैदु गुरू गोविंदा ॥
हरि हरि नामु अउखधु मुखि देवै काटै जम की फंधा ॥ (पन्ना ६१८)

सचमुच गुरु रहमत करके हरि-नाम की औषधि हमारे मुख में डालता है, जो यम के फंदों को काट देती है। ज़रूरत है तो बस अपने अज्ञान को समझते हुए ज्ञान स्वरूप गुरु की शरण में आने की तथा अपने गुनाहों एवं अवगुणों को स्वीकारते हुए उन्हें दूर करके असाध्य रोगों से मुक्त होने हेतु पूर्ण गुरु के मार्गदर्शन को अपनाने की।

सरब बैकुंठ मुकति मोख पाए ॥
एक निमख हरि के गुन गाए ॥
अनिक राज भोग बडिआई ॥
हरि के नाम की कथा मनि भाई ॥
बहु भोजन कापर संगीत ॥
रसना जपती हरि हरि नीत ॥
भली सु करनी सोभा धनवंत ॥
हिरदै बसे पूरन गुर मंत ॥
साधसंगि प्रभ देहु निवास ॥
सरब सूख नानक परगास ॥८॥

२०वीं असटपदी की ८वीं पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने प्रभु-नाम की महिमा को बयान करते हुए स्पष्ट किया है कि एक क्षण मात्र भी प्रभु का गुणगान किया जाए तो व्यक्ति समस्त सुख-मुक्ति, राज्य-भाग्य, बढ़ाई आदि का आलौकिक आनंद सहज रूप से प्राप्त कर सकता है। इसके लिए उसे अन्य प्रयोजनों की आवश्यकता नहीं रह जाती।

गुरु पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि जिस मनुष्य ने एक पलक के झपकने जितना समय भी परमेश्वर की महिमा का गान किया अर्थात् क्षण भर भी जिसने ईश्वर का यशोगान किया, उसे समस्त आत्मिक सुख प्राप्त हो गए समझो। जिस मनुष्य के हृदय को हरि-नाम की महिमा प्यारी लगने लगे उसे मानो अनेक राज्य, भोग और बढ़ाई

के सुख प्राप्त हो जाते हैं। जिसकी रसना (जीभ) सदैव हरि का नाम जपती है अर्थात् प्रभु का सिमरन करती है, उसे तो मानो अनेक प्रकार के भोजन, वस्त्र और संगीत से प्राप्त होने वाला आनंद मिल जाता है। जिस हृदय-घर में पूर्ण गुरु का उपदेश बस जाता है उसका आचरण पवित्र (अति उत्तम) हो जाता है अर्थात् उसकी करनी निर्मल हो जाती है। उसकी (सर्वत्र) शोभा होती है तथा वह बड़ा 'साहूकार' बन जाता है। अंतिम पंक्ति में गुरु पातशाह परमेश्वर के चरणों में यही अरदास करते हैं कि हे हरि! (मुझे) अपने संतों के चरणों में निवास बख़्शो, क्योंकि सतसंगत ही सारे सुखों का भंडार है।

उपरोक्त पउड़ी में प्रभु के सिमरन की महिमा के साथ-साथ संत-जनों की संगत के महत्त्व को भी उजागर किया गया है। परमेश्वर के नाम के साथ-साथ संत-पुरुषों की संगत से तकदीर बदल जाती है। गुरबाणी में बारंबार संत-जनों की संगत की महत्ता पर प्रकाश डाला गया है। साधारण रूप से एक धारणा है जिसे बड़े बुजुर्ग प्यार से गायन करते हैं-- "कोई करन नसीबां वाले, सतसंग दो घड़ीआं। सतसंग है बड़ा निराला, करदा कोई करमां वाला। करदा कोई करमां वाला, कर लो जिस करना होवे।"

जिस पर अकाल पुरख की रहमत हो उसे पूर्ण गुरु का मार्गदर्शन मिल जाता है और जिस पर पूर्ण गुरु की कृपा-दृष्टि हो उसे सतसंगत में जाकर नाम-सिमरन करने की बदौलत प्रभु की प्राप्ति होते देर नहीं लगती। पावन बाणी में संदेश है :

साचा धनु पाइओ हरि रंगि ॥
दुतरु तरे साध कै संगि ॥३॥
सुखि बैसहु संत सजन परवारु ॥
हरि धनु खटिओ जा का नाहि सुमारु ॥
जिसहि परापति तिसु गुरु देइ ॥
नानक बिरथा कोइ न हेइ ॥४॥ (पन्ना १६५)

सचमुच, इस संसार रूपी भवसागर को प्रभु-नाम एवं साधसंगत द्वारा ही सहजता से पार किया जा सकता है। 

कविता

अनुभूति

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

कभी देखी है,
आकाश में कटी पतंग के प्रवाह की उन्मुक्तता।
कभी महसूस की है,
बारिश में भीगे शरीर से टकराती ठंडी हवा से पैदा हुई सिहरन।
कभी देखे हैं,
किसी असहाय वृद्ध के कातर नेत्रों से बहते आंसू।
कभी महसूस की है,
किसी सोये हुए इंसान के चेहरे की मासूमियत।
कभी देखा है वह दृश्य,
जिसमें गगन की विराटता मात्र हो, धरती का कुछ भी नहीं।
कभी देखी है उस भक्त की भक्ति,
जो प्रस्तर-स्थल पर बैठकर भी भाव-सिद्धि कर लेता है।

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.); फोन : ९४११६०७६७२*

ख़बरनामा

श्री ननकाणा साहिब में श्री गुरु नानक देव जी के नाम पर यूनीवर्सिटी स्थापित हो : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २० जनवरी : पाकिस्तान की नेशनल एसेंबली के सदस्य श्री इसफन यार एम. भंडारा ने अपनी पत्नी जैसमीन भंडारा के साथ रूहानियत के केंद्र श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन किए तथा दोनों देशों की सलामती के लिए अरदास की। इसके बाद सूचना केंद्र में शिरोमणि गु प्र कमेटी के सचिव स. मनजीत सिंघ तथा अतिरिक्त सचिव स. दिलजीत सिंघ ने उनका स्वागत करते हुए उन्हें धार्मिक किताबों का सेट, शाल एवं गुरु-घर की बख़्शिश सिरोपाउ से सम्मानित किया तथा उनको जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु प्र कमेटी द्वारा पाकिस्तान सरकार के नाम लिखा मांग-पत्र सौंपा।

श्री इसफन यार एम. भंडारा को सौंपे जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा पाकिस्तान सरकार के नाम लिखे गए मांग-पत्र के बारे स. मनजीत सिंघ सचिव ने विस्तार से बताते हुए कहा कि पाकिस्तान सरकार से मांग की गई है कि पाकिस्तान में गुरुधामों के दर्शन-दीदार करने को जाने वाले श्रद्धालुओं की सुविधा हेतु श्री अमृतसर में वीज़ा सेंटर खोला जाए तथा वीज़ा-प्रणाली को सुखमय बनाया जाए। दिए गए मांग-पत्र में यह भी ज़िक्र किया गया है कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी सिक्खों की सिरमौर धार्मिक संस्था है। इसके द्वारा पाकिस्तान सराफ़तखाने को श्रद्धालुओं की भेजी जाती वीज़ा-सूची में से नाम न काटे जाएं, क्योंकि जब किसी श्रद्धालु का नाम काट दिया जाता है तो उसके मन को भारी ठेस पहुंचती है।

उन्होंने बताया कि पाकिस्तान सरकार में मांग की गई है कि यात्रियों की सुविधा हेतु लाहौर में सराय बनाने के लिए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी को जगह सुनिश्चित करवाई जाए तथा सिक्ख धर्म के प्रवर्तक श्री गुरु नानक देव जी महाराज के नाम पर श्री ननकाणा साहिब में यूनीवर्सिटी स्थापित की जाए। उन्होंने बताया कि दिए गए मांग-पत्र में यह भी मांग की गई है कि गुरुद्वारा श्री करतारपुर साहिब जाने के लिए रास्ता खोला जाए तथा उसके दर्शन करने के लिए एक दिन का वीज़ा जारी करने की व्यवस्था उपलब्ध की जाए। उन्होंने कहा कि गुरुद्वारा साहिबान के नाम लगती ज़मीनों तथा अन्य जायदादों के अतिरिक्त विरासती इमारतों को भी सुरक्षित किया जाए तथा इन जायदादों-इमारतों पर हुए नाजायज़ कब्जे हटाए जाएं और आगे से इनकी सुरक्षा नियमित की जाए।

श्री इसफन यार एम. भंडारा ने शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा मिले आदर-सम्मान के बदले जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का धन्यवाद किया और कहा कि पाकिस्तान सरकार के नाम जो मांग-पत्र उनको सौंपा गया है, उस पर गंभीरता से विचार किया जाएगा।

ज्ञानी गुरमुख सिंघ ने तख़्त श्री दमदमा साहिब के कार्यकारी जत्थेदार के रूप में सेवा संभाली

तलवंडी साबो : २७ जनवरी : १७ जनवरी, २०१५ को गुरुद्वारा श्री फ़तहिगढ़ साहिब में जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की अगुआई में शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की कार्यकारिणी

की एकत्रता के दौरान तख़्त श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो (बठिंडा) का कार्यकारी जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी गुरमुख सिंघ, मुख्य ग्रंथी, श्री अकाल तख़्त साहिब को लगाने का फैसला किया गया था, जिसके अनुसार ज्ञानी गुरमुख सिंघ ने तख़्त श्री दमदमा साहिब के कार्यकारी जत्थेदार के रूप में सेवा संभाल ली है।

सेवा-संभाल समागम के समय जत्थेदार अवतार सिंघ ने ज्ञानी गुरमुख सिंघ को मुबारकबाद देते हुए कहा कि इन्होंने थोड़ा समय पहले ही श्री अकाल तख़्त साहिब के मुख्य ग्रंथी के रूप में सेवा संभाली है। इनके द्वारा थोड़े समय में ही श्री अकाल तख़्त साहिब में सुशोभित सिक्ख गुरु साहिबान के ऐतिहासिक शस्त्रों की सेवा करवाई गई है तथा अब साका श्री ननकाणा साहिब तथा जून, १९८४ में श्री हरिमंदर साहिब पर हुए हमले के दौरान जख़्मी हुए श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूपों की सेवा करवाई जा रही है। इनके द्वारा करवाई जा रही सेवा को मुख्य रखते हुए ही इनको तख़्त श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो के कार्यकारी जत्थेदार के रूप में सेवा सौंपी गई है।

सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ, जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब ने समूह संगत को अपील की कि पंथक फैसलों के लिए वो ज्ञानी गुरमुख सिंघ का साथ दे। इस अवसर पर श्री हरिमंदर साहिब की तरफ से सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ ने, श्री अकाल तख़्त साहिब की तरफ से सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की तरफ से जत्थेदार अवतार सिंघ ने, शिरोमणि अकाली दल की तरफ से स. सिकंदर सिंघ मलूका तथा स. बलविंदर सिंघ भूंदड़ ने, दमदमी टकसाल की तरफ से बाबा सुखचैन सिंघ ने, बुड्ढा दल की तरफ से बाबा जस्सा सिंघ ने, हरीआं वेलां वालों की तरफ से बाबा नागर सिंघ ने, बाबा बिधी चंद संप्रदाय की तरफ से बाबा अवतार सिंघ ने, तरुणा दल की तरफ से बाबा गज्जण सिंघ ने तथा अन्य संप्रदायों, टकसालों, सिंघ सभाओं, निहंग सिंघ जत्थेबंदियों द्वारा ज्ञानी गुरमुख सिंघ को दसतारें भेंट की गईं। इस अवसर पर पंथक शख़्सियतों के अतिरिक्त बड़ी संख्या में संगत हाज़िर थी।

तीन हज़ार प्राणी अमृत-पान कर गुरु वाले बने

श्री अमृतसर : २७ जनवरी : श्री हरिमंदर साहिब के अपमान को न सहन करते हुए रण-क्षेत्र में जूझने वाले महान शूरवीर, कहनी एवं कथनी के पूरे बाबा दीप सिंघ जी शहीद के जन्म-दिवस को समर्पित गुरुद्वारा शहीदगंज साहिब बाबा दीप सिंघ जी, चाटीविंड गेट में गुरमति समागम करवाए गए। श्री अखंड पाठ साहिब के भोग के उपरांत श्री हरिमंदर साहिब से आए मुखवाक (हुकमनामा) की कथा श्री हरिमंदर साहिब के भूतपूर्व ग्रंथी सिंघ साहिब ज्ञानी जसवंत सिंघ ने की। इसके उपरांत गुरुद्वारा श्री शहीदगंज साहिब में अमृत-संचार करवाया गया, जिसमें लगभग तीन हज़ार प्राणी खंडे-बाटे की पाहुल छककर गुरु वाले बने। संगत के साथ गुरमति विचारें सांझी करते हुए सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ, जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब ने बाबा दीप सिंघ जी के जीवन पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि आज जिन तीन हज़ार प्राणियों ने अमृत-पान किया है, वे बधाई के पात्र हैं। सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ, मुख्य ग्रंथी श्री हरिमंदर साहिब ने बाबा दीप सिंघ जी के जीवन से दिशा-निर्देश लेने के लिए प्रेरित किया। समागम में पंथ-प्रसिद्ध शख़्सियतों के अतिरिक्त भारी संख्या में संगत हाज़िर थी। ❁

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०३-२०१५